पराग

फरवरी १९७१

१५४वां अंक

kissekahani.com

अनुक्रमणिका

फोटो : आर. बी. एस. मणी

मुखपृष्ठ :
नन्हो पुरखिन : कन्हैयालाल नंदन १

सरस कहानियां :
फिसलने से पहले : प्रदीपकुमार ८
कौन हारा : मधुंजय वाचस्पति १२
टेलीफोन : अरुणकुमार आनंद १६
गहरे पानी की मछली : स्वपनबुड़ो २०
पोस्ट कार्ड : सत्यस्वरूप दत्त २८
समदर्शी : हसनजमाल क़ीपा ३६
बाजार में डाका : रोहिताश्व मित्तल ४०
सबूत : विद्वान् के. नारायणन् ४५

चटपटी कविताएं :
पोल खुल गई : कल्पना व्यास ४
जूहेराम को चेतावनी : विश्वनाथ गुप्त ४
हाथी आया गांव में : रमेश रंजक ५
इतनी चाबी भरने पर भी : विश्वबंधु ५
मौसम की पुस्तक : सीताराम गुप्त ३२
भालूमल की कार : विनोद रस्तोगी ५६
मुर्ग मुसल्लम : पूनम तिवारी ५६

सुबू-बुबू
मूड नहीं : श्रीप्रसाद ५७
हुआ रंग बदरंग : मीना ५७
: शांती मालवीय ५७

मजेदार कार्टून-कथाएं :
बुद्धूराम : आबिद सुरती १९
छोटू और लंबू : शहाब २४

अन्य रोचक सामग्री :
अकाल की कुंजी (फोटो कथा) : ब्रह्मदेव ६
लखपति भैंस (कार्टून) : पंकज गोस्वामी ११
क्या तुम जानते हो : कुमारसंभव २२
स्पष्टीकरण (कार्टून) : सद्गुरु २३
फोड़ा और बुखार (लघु-कथा) : माधव पंडित ३९
डाक-टिकटों पर फूल : जितेंद्रकुमार चतुर्वेदी ५२

स्थायी स्तंभ :
छोटी छोटी बातें : सिम्स १५
कहो कैसी रही (चुटकुले) : टंडन २७
शीर्षक प्रतियोगिता-२४ : ४७
उद्धरण प्रतियोगिता-२८ : ४८
बच्चों की नई पुस्तकें : लक्ष्मीचंद्र गुप्त ५१
रंग भरो प्रतियोगिता—१०४ : ५९

वार्षिक शुल्क : स्थानीय : रु. ६—००
डाक से : रु. ६—५०

संपादक : आनंदप्रकाश जैन

kissekahani.com

बच्चू, अब तो पोल खुल गई!

टी-ली-ली-ली . . . .
और सुनाओ, चंदा मामा,
भेद तुम्हारा हमने जाना,
बच्चू, अब तो पोल खुल गई!

मामा बन कर तुमने सबको
बुद्धू खूब बनाया है,
खूब गपागप हम बच्चों का
दूध-बताशा खाया है!

कभी बने परियों का रथ तो—
कभी बने गुड़िया की थाली,
सुंदर सुंदर बने खिलौने,
ओ मृगछौने!

सिर्फ तुम्हें पाने की खातिर
फूट-फूट हम रोए हैं,
जब मम्मी ने लोरी गाई,
तब जाकर हम सोए हैं!
लेकिन अब तो सारा धुल गई,
टी-ली-ली-ली पोल खुल गई!

पता चल गया हम बच्चों को,
सारी बातें नकली थीं;
उस बुढ़िया दादी के घर में
चर्खा था ना तकली थी!

इतना जो चमचम करते हो,
सच में काले-काले हो,
नहीं तुम्हारे घर में परियां,
नहीं वो चर्खे वाली गुड़िया,
नहीं तुम्हारे पास खिलौने,
ओ नकली मृगछौने!

अब मैं बुद्धू नहीं बनूंगा,
नकली मामा तुम्हें कहूंगा!
गुपचुप क्यों हो?
टी-ली-ली-ली पोल खुल गई!
मामा जी की पोल खुल गई!

—कल्पना व्यास

चूहेराम को चेतावनी

मिस्टर चूहेराम!
इस कमरे में क्यों आए तुम,
क्या था ऐसा काम?
खटर-पटर कर तुमने मेरी
कर दी नींद हराम!

जाओ, अब मुझको सोने दो,
शेष नींद पूरी होने दो,
करने दो तुम मुझे रात भर
बस पूरा आराम.

अगर नहीं मानी तुमने यह बात,
बुरा न होगा मुझसे बढ़कर, तात,
बुलवाऊंगा तार भेजकर
तो आएगी बिल्ली,
गई हुई जो सात दिवस के
सम्मेलन में दिल्ली!
उसका तो टूटेगा केवल फास्ट;
किंतु तुम्हारा दिन वह होगा लास्ट!

—विश्वनाथ गुप्त

हाथी आया गांव में

हाथी आया गांव में!
सूंड़ उठाकर खड़ा हो गया,
बड़े नीम की छांव में!

भारी भरकम काला-काला,
लंबे-लंबे दांतों वाला!
तोड़ रहा गन्ने की लाठी,
लगता है शौकीन निराला!

उठा-उठा कर सूंड़ मारता
है, क्यों अपने पांव में?
हाथी आया गांव में!

कान बड़े हैं, आंखें छोटी,
सारी-सारी चमड़ी मोटी,
हर दिन सुबह-शाम खाता है,
बारह सेर चून की रोटी!

रोज नहाने को जाता है—
काका के तालाब में!
हाथी आया गांव में!

—रमेश रंजक

इतनी चाभी भरने पर भी

दरवाजे पर लटक रहा था,
बड़े पेट वाला ताला!
नन्ही चाभी ने पल भर में
देखो उसे खोल डाला!

दिन में केवल एक बार ही
चाभी भरनी होती है;
घड़ी सदा 'टिक-टिक' करती है,
कभी नहीं वह सोती है.

यह है ग्रामोफोन, लगाओ—
तुम रिकार्ड अपने दिल का!
चाभी भर दो, बहलाएगा—
जी यह सारी महफिल का!

चाभी भरते ही यह गुड़िया,
देखो, बैंड बजाती है!
चाभी वाली रेल दूर से
'छुक-छुक' करती आती है!

बड़ी करामाती यह चाभी,
इसकी महिमा अपरंपार!
लेकिन यह जादूगरनी भी
एक जगह पर जाती हार—

जब हम सबके कान ऐंठकर
कक्षा में कहते टीचर,
"इतनी चाभी भरने पर भी
गधे नहीं आते पढ़कर!"

—विश्वबंधु

अक़्ल की कुंजी

२

२– ओह! आपको इसमें भी कमी नजर आ गई!

१– देखा, कितनी अच्छी फ्रॉक है!

५– मालूम होता है अपनी अक्ल का ताला खोलना पड़ेगा!

५

फोटो : ब्रह्मदेव

३– चुन्नी, मुन्नी, टुन्नी की
काँकों से तो लाख दर्जे
अच्छी है!

४– लगता तो मुझे भी है अब
कि कुछ कमी रह ही गई!

६– लीजिए, हो गई न अब
तो सारी कमी दूर!

दीपक ने एक दरी, एक चादर और किताबें बगल में दबाई और घर से बाहर निकल आया. तेजी से कदम बढ़ाता हुआ वह पब्लिक पार्क की तरफ चल दिया. रात के नौ बजे थे. हल्की-हल्की ठंड थी. पार्क की ट्यूब लाइटें जली हुई थीं. पार्क में घूमने-फिरने वाले लोगों की संख्या बहुत कम हो गई थी. पार्क में पहुंचकर दीपक ने एक ट्यूब लाइट के नीचे अपनी दरी बिछाई और चादर ओढ़कर अंग्रेजी की पुस्तक पढ़ने लगा. कल उसका अंग्रेजी का पेपर जो है.

दीपक के घर की स्थिति बहुत नाजुक है. पिता को गुजरे दो बरस हो चुके हैं. घर में उसके अलावा उसकी बीमार मां है, जो हमेशा चारपाई पर पड़ी रहती है. घर का काम-काज करना तो दूर शौचालय तक बड़ी मुश्किल से जा पाती है. बड़ी दीदी है, जो डेढ़ सौ रुपये पर एक प्राइवेट स्कूल में टीचर है. एक चार साल की बहन है—कुक्की, जिसका काम दिन भर खाना और एक घर से दूसरे घर की आवारागर्दी करना है.

दीपक बहुत सुबह ही उठ जाता है. गर्मियां हों या सर्दियां नहा-धोकर तैयार हो जाता है. थोड़ी देर पढ़ने के बाद वह एजेंसी चला जाता है, जहां से अखबार और पत्रिकाएं साइकिल पर लादकर घर-घर बांटता है. इस काम से फारिग होकर वह घर आता है. नाश्ता करके दोपहर का भोजन डिब्बे में डालकर वह स्कूल चला जाता है. स्कूल घर से नजदीक है, इसलिए बीच में कभी उसे वक्त मिलता है, तो आकर मां का हाल पूछ जाता है.

kissekahani.com

कहानी

फिसलने से पहले

स्कूल से आकर दीपक कुछ देर आराम करता और फिर पढ़ने बैठ जाता. तब तक दीदी भी स्कूल से आ जाती. इस वक्त उनकी हालत देखने लायक होती है. बिखरे हुए बाल, घुटी-घुटी आंखें, सिर में दर्द. . .! वह पहले मां के पास जाती है. पर्स में से दवा निकालकर उन्हें पकड़ा देती है और बताती है कि दवा कितनी-कितनी देर बाद लेनी है. वह मां को आश्वासन दिलाती है कि मां जल्द ही ठीक हो जाएंगी. मां दीदी के सिर पर हाथ फेर कर उन्हें प्यार करती है और भरे गले से कहती है—

'आज दीपक के पिता जिंदा होते, तो यह दिन न देखना पड़ता कि मेरे बच्चे मेरे सामने दिन-रात पिसकर कमाएं और मैं हरामियों की तरह रोटियां तोड़ूं. भगवान ने तो मुझे घर का काम करने लायक भी न छोड़ा!'

मां से निबटकर दीदी चाय बनाती है और दीपक से उसकी पढ़ाई वगैरा का हाल पूछती है. चाय पीकर दीदी आराम करती है या घर का कोई छोटा-मोटा काम कर डालती है. शाम को दीदी तो खाना बनाने में लग जाती है और दीपक कुक्की को लेकर पार्क में घूमने चला जाता है. ग्राउंड में वह लड़कों को क्रिकेट

प्रदीपकुमार

खेलते हुए देखता है, तो उसका मन करता है कि वह भी उनके साथ खेले. पर उसके पास इतना वक्त कहां!

घूमकर घर आता है, तो खाना तैयार मिलता है. खाना खाकर वह पार्क में पढ़ने चला जाता है. इन दिनों दीपक की परीक्षाएं चल रही हैं, अतः वह पार्क में रात में ग्यारह - बारह बजे तक पढ़ता रहता है. घर में प्रकाश की उचित व्यवस्था होती और मोटरों का कानफाड़ शोर-गुल उसके मकान तक न पहुंचता, तो उसे क्या जरूरत थी पार्क में जाकर पढ़ने की!

पढ़कर घर लौटता है, तो दीदी जग रही होती है, और लालटेन के पीले प्रकाश में माथे पर हाथ रखे कुछ लिख रही होती है. दीपक को देखते ही उल्लास से कहती है—'दीपक, वो तेरी प्राब्लम नंबर सोलह हल नहीं हो रही थी न? अब मैंने हल कर दी है. मुझसे समझ कर सोना. और हां, दूसरी शिफ्ट में तेरा हिन्दी का पेपर है न? तू ऐसा करना, मुझे अपनी हिन्दी की पुस्तक दे देना. मैं नोट्स तैयार कर दूंगी कठिन पाठों के. पहले पेपर के बाद जो वक्त मिलेगा, उसमें याद कर लेना'.

दीपक का मन न जाने कैसा हो आता है. वह दीदी के कंधे पर सिर रखकर फफक पड़ता है. दीदी प्यार और सांत्वना भरे स्वर में उससे कहती—'पागल, ऐसे रोने से कहीं पार पड़ता है. परिस्थितियों से टक्कर तो लेनी ही पड़ती है. . .' और लालटेन के हल्के प्रकाश में वह दीदी का चमकता चेहरा देखता, तो उसे लगता, दीदी नहीं साक्षात् देवी हैं जो अपना अभय हाथ उसके सिर पर रखे हुए हैं और अभावों से टक्कर लेने के लिए उसमें लगातार बल भरे जा रही हैं!

इतने अभावों और कठिनाइयों के बावजूद दीपक सबके प्रति ईमानदार था. उसका रास्ता ईमानदारी का रास्ता था और वह कभी अपने रास्ते से डिगा नहीं. अखबार बेचने से जो कुछ उसे मिलता, वह दीदी को पकड़ा देता. लेकिन दीदी उसमें से एक पैसा भी न लेती थीं. कहतीं—'तू अपना खर्च निकाले जा, यही बहुत है.' और अपना खर्च निकालने के बाद भी दस-बीस

रुपये वह बचा लेता था, जो वह जमा करता जा रहा था.

पर दीपक को यह नहीं मालूम था कि इस संसार में चलना काई पर चलना है. जरा असावधानी हुई नहीं कि बड़ाम से फिसल गए और फंस गए दलदल में. फिर निकल पाना जरा मुश्किल ही है...

●

टनन...

चर्च के घंटे ने एक बजाया और पढ़ने के बाद अपने घर जा रहे दीपक को जैसे होश आया. अब तक वह न जाने क्या-क्या सोचता हुआ चल रहा था. रास्ते में कई बार ठोकर खाकर गिरते-गिरते बचा. एक बार बिजली के खंभे से टकरा गया. किताबें वगैरह गिर गईं. किताबें उठाकर वह फिर संभलकर चलने लगा. उसने सिर को जोर का झटका दिया, जैसे मन में आई हुई कोई बात बाहर निकालना चाह रहा हो. पर लगता है कोई बात परछाईं की तरह उसके साथ है.

एकाएक दीपक चिल्ला पड़ा—"हट जाओ मेरे सामने से. तुम दोनों दगाबाज हो! मुझे गुमराह करना चाहते हो...हट जाओ!"

यह कहते ही वह हांफने लगा. हांफते-हांफते बोला, "नहीं-नहीं, तुम ठीक कहते हो. तुम जो कहते हो बिल्कुल ठीक है. तुम्हारी बातें मुझे मंजूर हैं. मैं ही अब तक गलत चल रहा था..."

अचानक दीपक ने होंठ काट लिये. यह क्या आधी रात को सड़क पर बकता जा रहा है! उसे क्या हो गया है! देखने वाले कहेंगे—पागल है!

घर पहुंचकर दीपक ने किवाड़ खटखटाया. उसने अपने पीछे मुड़कर देखा, कहीं वे दो परछाइयां तो उसके पीछे नहीं लगी हुई हैं! वह घर के अंदर घुसेगा, तो साथ में कहीं वे दो परछाइयां भी तो नहीं घुस जाएंगी!

दीदी ने दरवाजा खोला. वह घबराया हुआ-सा तेजी से अंदर घुस गया.

"दीदी, जल्दी से दरवाजा बंद कर लो."

"अरे," दीदी ने उसे आश्चर्य से देखा. "जल्दी से क्यों? पीछे भूत तो नहीं लगे हुए थे!"

"लगे हुए थे, दीदी. अब भी लगे हुए हैं. जल्दी से दरवाजा बंद कर लो, नहीं तो अंदर घुस आएंगे."

दीदी हंस पड़ीं. "क्या बात है? 'मानसिक-चिकित्सालय मार्ग' से होकर तो नहीं आ रहा है?"

"नहीं-नहीं, मेरे पीछे सचमुच भूत लगे हुए हैं. अब मैं आपको कैसे बताऊं!"

"अच्छा..." दीदी फिर हंस पड़ीं. "पहले तो तू कभी भूतों-वूतों से नहीं डरता था. पीली कोठी के भूतों का रहस्य भी तूने अकेले ही खोजा था. फिर आज तुझे भूतों से डर क्यों लग रहा है?"

"दीदी...ऽ...भूत कई तरह के होते हैं...खैर, एक बजा है. मैं अब सोऊंगा."

चादर ओढ़कर दीपक लेट गया. सोना चाहा, पर आंखों में नींद कहां! वही दो भूत रह-रहकर उसके सामने आ जाते थे, जो अभी घंटा भर पहले यानी जब वह पार्क में बैठा पढ़ रहा था उसके पास आए थे...

वह अपने पढ़े हुए को दोहरा रहा था कि उसने देखा कि उसकी पुस्तक पर दो काली छायाएं पड़ रही हैं जो धीरे-धीरे उसकी तरफ बढ़ रही हैं. उसने चौंककर इधर-उधर देखा. उसके पीछे सुकांत और जयंत—उसके स्कूल के छंटे हुए गुंडे—आकर खड़े हो गए थे. जिनकी परछाइयां ट्यूब लाइट की वजह से उसपर पड़ रही थीं. उन्हें अचानक इस तरह अपने पास पाकर दीपक कुछ हड़बड़ा-सा गया. पर शीघ्र ही उसने अपनी स्थिति पर काबू पा लिया.

"आओ..." दीपक भुनभुनाया-सा बोला.

"लास्ट शो देखकर आ रहे थे; सोचा, चलो यार से मिलते चलें. यहां और कब तक बैठोगे? सुबह तक?" नीचे दीपक के पास बैठता हुआ सुकांत बोला. जयंत भी उसके पास बैठ गया.

दीपक उनसे कुछ दूर सरक गया. सुकांत और जयंत सिगरेट पीते थे और इस वक्त उनके मुंह से बहुत बुरी बू आ रही थी.

"मैं अब बस रिवीजन करके घर ही जाने वाला था," दीपक धीरे से बोला.

सुकांत और जयंत दोनों ने जेब में से सिगरेट निकालकर सुलगा ली और दीपक को भी पेश की. दीपक ऊपर से नीचे तक कांप गया. सिगरेट कितनी बुरी चीज होती है और ये उसे पीने के लिए कह रहे हैं! उसने मना कर दिया. कहा कि वह सिगरेट को बुरी चीज समझता है अतः नहीं पीता. सुकांत ने उसे दो-एक बार जोर देकर भी कहा. उसे फुसलाया भी, कि यहां कौन देख रहा है, पी ले. सिगरेट के बिना जीवन ही अधूरा होता है. पर दीपक अटल रहा और दृढ़ता से सिगरेट पीने को मना करता रहा. आखिर हार उन्हीं की हुई.

सुकांत बोला, "अच्छा, भई, तुझे नहीं पीनी तो न सही. हम कौन-सी जबरदस्ती कर रहे हैं."

दीपक को कतई उम्मीद न थी कि सुकांत उसका इतनी जल्दी पीछा छोड़ देगा. इतनी जल्दी क्या, सुकांत और जयंत की जोड़ी हाथ धोकर जिसके पीछे पड़ जाए, उसका पीछा छूटना जरा कठिन ही होता है. अब तक जिस-जिस के पीछे ये दोनों पड़े हैं उन्हें बरबाद ही करके छोड़ा है. जो समझदार थे वे तो जल्द ही संभल गए, पर जो इनके दिखाए सब्ज बागों के भुलावे में आ गए, वे अब सड़कों पर आवारागर्दी करते नजर आते हैं. उसी स्कूल में होते हुए भी दीपक को यह न मालूम था कि ये दोनों इतनी बुरी तरह बिगड़े हुए हैं कि अपने साथ किसी और की जिंदगी भी खराब कर सकते हैं. वह तो यही सोचता था कि अगर वह किसी के साथ शरीफ है, तो कोई उसका

बुरा क्यों चाहने लगा? अपने आप में मजबूत दीपक को यह पता नहीं था कि वह स्वयं अभी इतना कच्चा है कि उस पर किसी भी 'ऐसी-वैसी' बात का असर तुरंत हो सकता है.

"दीपक, एक बात बता. . ." सुकांत ने पूछा.

दीपक जैसे खो-सा गया था. सुकांत की आवाज सुन कर सहसा होश में आ गया : "हां. . .आं. . ."

"अखबार वगैरा बेचकर तुझे कितने रुपये मिल जाते हैं?"

पहले तो दीपक ने सोचा, कहे—'तुम्हें क्या मतलब', पर न जाने क्या सोचकर बोला, "यही कोई पचास एक रुपये!"

"बस?"

"कम है क्या! बैटर दैन नथिंग."

"वो तो ठीक है, पर पचास में तेरा जेब-खर्च चल जाता है?"

"जेब-खर्च? पचास में से आधे तो मैं बचा लेता हूं. बाकी में फीस-किताबें वगैरा तथा और इधर-उधर का खर्चा निकालता हूं."

"अरे, फीस और किताबों के पैसे भी तू अपनी कमाई में से देता है? और पच्चीस बचा भी लेता है! हद हो गई! पचास रुपये का तो इस बार हमारा सिर्फ 'रॉक्सी' वाले का चाय-काफी का ही बिल आ गया है. क्यों, जयंत?" सुकांत हैरत में कह रहा था.

"हां और क्या. . .!"

"अबे, तेरी बहन किसलिए कमाती है? पचास रुपये तू मुश्किल से कमाता है और वही उलटे-सीधे कामों पर खर्च कर देता है. तेरे खाने-पीने तक को कुछ नहीं बचता. आखिर ऐसी जिंदगी किस काम की? अपनी कमाई में से तो तुझे सिर्फ जेब-खर्च पूरा करना चाहिए. बाकी फीस-वीस के पैसे तो तेरी बहन को ही देने चाहिएं, जो कि उनका फर्ज है. मैंने तो ऐसा कहीं नहीं सुना कि भाई कमाए और बहन खाए. . ."

"सुकांत!" दीपक की आवाज में तेजी आ गई थी. "कौन कहता है मैं कमाता हूं और बहन खाती है? वह भी तो कमाती है. घर का सारा खर्च दीदी की कमाई में से ही निकलता है. मेरी कमाई में से तो वह एक पैसा भी नहीं छूतीं. बहन का फर्ज तो तूने सुना दिया, लेकिन भाई का क्या फर्ज होता है, यह तूने नहीं बताया? घर-भर को पालने का ठेका बहनों का नहीं होता है. पिता की अनुपस्थिति में घर चलाने का काम भाइयों का होता है. मैं तो घर के लिए कुछ भी नहीं कर पाता हूं, जो करता हूं अपने लिए. आज अगर पिता जी होते. . ."

"आना-जाना तो खैर इस दुनिया में लगा ही रहता है," सुकांत ने लापरवाही से कहा. "पर वर्तमान को दुखी क्यों बनाते हो? कल किसने देखा है? क्या मालूम आने वाले दिन इससे भी खराब आएं! जो कुछ है, बस वर्तमान है. इसे ही ढंग से जियो. और तुम्हारी उम्र है ऐश करने की. अभी से भविष्य की चिंता में मरने-खपने की नहीं. कल के इंतजार में आज को क्यों गंवाते हो? अब यही देख न, ये जो तू रोज सरकारी लैंप-पोस्ट के नीचे आंखें फोड़ता है, इससे तुझे मिलेगा क्या? अच्छी डिवीजन. लेकिन मालूम है, पढ़े-लिखे लोगों को सड़क पर झाड़ू लगाने का काम भी नहीं मिलता है. क्यों, जयंत?" सुकांत ने जयंत की तरफ देखा.

"हां, और क्या. . .!"

"दीपक, तुझे अगर पैसों की जरूरत हो, तो हमसे कह! हमारे पास बहुत पैसा है. यह देख!" कहकर सुकांत ने हाथ में पकड़ा ब्रीफ-केस खोलकर दीपक के आगे कर दिया. दीपक की आंखें फटी की फटी रह गईं. ब्रीफ-केस ऊपर तक नोटों से भरा हुआ था. एक झलक दिखाकर सुकांत ने ब्रीफ-केस बंद कर दिया.

"तुम्हारे डैडी भी तो क्लर्क हैं, फिर समझ में नहीं आता, तुम्हारे पास इतना पैसा. . .!"

सुकांत और जयंत दोनों ठठाकर हंस पड़े. सुकांत

(कृपया पृष्ठ ३४ देखिए)

लखपति भैंस—

"बाबू जी, इसकी कीमत तीन लाख एक सौ पचास होगी. एक सौ पचास इसकी कीमत है, और मेरी तीन लाख की जो लॉटरी निकली थी, उसका यह टिकट निगल गई है!"

कौन हारा

kissekahani.com

पिछली सर्दियों में जब भारत के साथ विदेशी क्रिकेट टीमों की टेस्ट श्रृंखलाएं आरंभ हुईं, तो जैसे हमारे छोटे-से नगर में भी क्रिकेट का रोग छूत की बीमारी की तरह फैल गया. जिन लड़कों की दिलचस्पी फुटबाल अथवा हाकी में थी, वे भी दिन भर इसी की बात करते या फिर रेडियो से मुंह जोड़े खेल के मैदान से आता आंखों देखा हाल सुनते. पान वालों की दनादन बिक्री होती, क्योंकि जिनके पास अपने रेडियो सेट नहीं थे, वे इन्हीं दूकानों पर खड़े खेल के मैदान से आ रहे वर्णन का मजा लूटते.

अगले महीने की पहली तारीख को अचानक मुझे प्रिंसिपल महोदय ने अपने कमरे में बुलवाया. मैं स्कूल में नया-नया अध्यापक लगा था और आठवीं कक्षा का क्लास-टीचर बनाया गया था. सोचा, कुछ कक्षा-संबंधी आदेश होंगे. परंतु कमरे में घुसते ही प्रिंसिपल महोदय ने मुझसे कहा—"आइए, खिलाड़ी जी, बैठिए!" मुझे कुछ हैरानी हुई. आगे बात जारी रखते हुए उन्होंने कहा—"मैं आपका पुराना रिकार्ड पलट रहा था, तो पाया कि आप अपने कॉलेज के माने हुए क्रिकेट खिलाड़ी रहे हैं. मैंने सोचा क्यों न आपके तजुर्बे का लाभ उठाऊं. दरअसल मुझे भी इस खेल में बहुत रुचि है. ऐसे बहुत कम खेल हैं जो लड़कों को एक साथ काम करने की भावना सिखाते हों. इसके अतिरिक्त धीरज के साथ एकाग्र होकर खेलने का पाठ भी हमें क्रिकेट से मिलता है. देखिए, अगले महीने से इस जिले के स्कूलों के मैच आरंभ होंगे. हमारा स्कूल एकदम नया है, पर फिर भी मैं चाहता हूं कि हमारी टीम इन मैचों में नाम कमाए. समय थोड़ा है, अच्छे खिलाड़ियों की कमी है, पर अगर आप थोड़ा प्रयत्न करें, तो छात्रों में से एक अच्छी टीम अवश्य निकल आएगी. उनको मैच के लिए तैयार करने का सारा भार आप पर डाल रहा हूं. अतः आज से आप क्रिकेट के 'इंस्ट्रक्टर' नियुक्त हुए.

'इंस्ट्रक्टर' माने सिखाने वाला. सो मैंने उसी दिन से सिखाना आरंभ कर दिया. स्कूल के पास खेल का अच्छा सामान न था. सब से पहले उसी की कमी पूरी की गई.

सभी कक्षाओं के बीच आपस में मैच होने लगे और इस प्रकार से कुछ बहुत ही अच्छे खिलाड़ी मेरी दृष्टि में आ गए. शीघ्र ही लगभग बीस लड़कों को चुन लिया गया और स्कूल की छुट्टी के बाद मैंने उनको खेल सही प्रकार से खेलने की शिक्षा देनी आरंभ कर दी. लड़कों में फुर्ती थी, उत्साह था और जब उनको प्रिंसिपल की इच्छा का पता चला, तो उनका उत्साह दूना हो गया. कई बार वे मुझे क्लास छोड़ने पर बाध्य कर देते और तब मुझे बैटिंग करने या बॉल फेंकने का कोई नया गुर सिखाने जाना पड़ता. कुछ केवल बॉल फेंकने में रुचि रखते थे और कुछ केवल लकड़ी के बल्ले को अपना हथियार समझते थे.

दूसरी टीम को खिलाते समय एक टीम को 'फील्डिंग' यानी अपने क्षेत्र की रक्षा करनी होती है. यह हमारी कमजोरी थी. अतः इस ओर विशेष ध्यान देना बहुत आवश्यक था.

परंतु मेरी सब से बड़ी समस्या थी कि टीम का नेता कौन होगा? वास्तव में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वही टीम जीतती है जिसका नेता समझदार और चतुर हो, साथ ही जिसका प्रभाव अपने नीचे खेलने वाले प्रत्येक खिलाड़ी पर हो. मैंने भी टीम का अच्छा नेता चुनने में कोई कसर

नहीं रखी. सभी लड़के खेलने में एक जैसे थे, परंतु उनमें अजीत वर्मा नाम के एक लड़के ने मेरे ऊपर बहुत प्रभाव डाला. वह खेल के समय आसपास की सभी वस्तुओं को भूल जाता था और 'अज्जू' के नाम से प्रसिद्ध था. मैंने यह भी सुना था कि उसके सेक्शन में प्रत्येक लड़का उसकी आवाज और उसके घूंसे से डरता था. नवीं कक्षा में यह उसका दूसरा साल था और जिस स्कूल से वह आया था उसमें किसी सहपाठी के साथ हाथापाई करते समय हथियार के रूप में डिवाइडर निकाल लेने के अपराध में उसे पंद्रह दिन स्कूल न आने की सजा भी मिली थी. मेरे साथ के सभी अध्यापकों की उसके विषय में राय अच्छी न थी और वे उसे क्लास में कुछ भी सजा देने में डरते थे.

पर मुझे वही एक स्कूल की टीम का नेता बनने योग्य जंचा. उसमें वाकई एक अच्छे नेता बनने के गुण थे. मुझे उसके पुराने इतिहास से क्या लेना-देना था. कक्षाओं के आपसी मैचों में मैंने उस पर विशेष रूप से ध्यान रखा और पाया कि खेल के मैदान में वह अपने नीचे खेलने वाले किसी भी खिलाड़ी को सुस्त अथवा लापरवाह नहीं होने देता. अपनी कक्षा को विजय दिलाने के लिए उसने जो कुछ प्रयत्न किया, उससे उसने सभी का विश्वास जीत लिया.

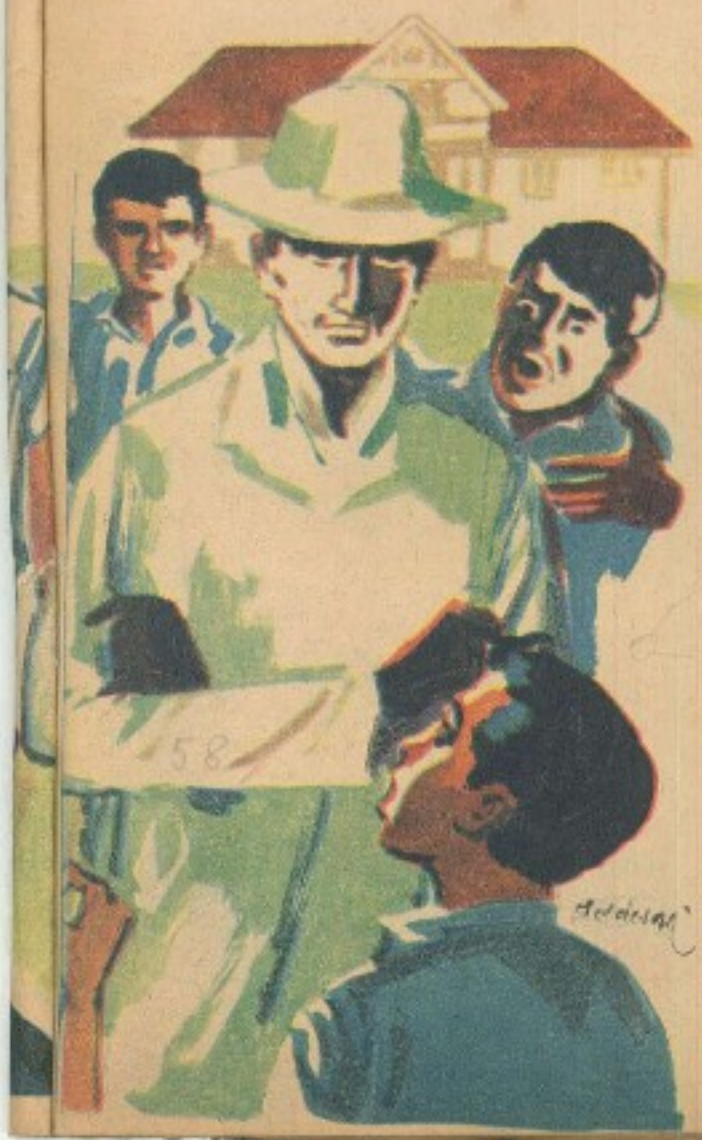

जब जिले के स्कूलों के मध्य आपसी मैच आरंभ हुए, तो हमने भी तैयारी तेज कर दी. सुबह लगभग दो घंटे का समय उनको और प्रशिक्षण के लिए मिलने लगा.

सब से पहला मैच एक पुराने हायर सेकेंडरी स्कूल के साथ पड़ा, जो पहले कई साल जिले का शीर्ष जीतते जीतते रह गया था. परंतु 'अज्जू' के नेतृत्व में हमारी टीम किसी से भी भिड़ने को तैयार थी. मैच हुआ और जैसी आशा थी, हमने विपक्षी दल को बहुत आसानी से परास्त कर दिया. 'अज्जू' ने उस दिन साठ से भी अधिक रन बनाए और उसे कोई आउट नहीं कर सका.

मधुजय वाचस्पति

पहली ही विजय ने लड़कों के दिलों में आत्मविश्वास जगा दिया था. फिर हमारा सामना भिन्न-भिन्न स्कूलों के दलों से हुआ और प्रत्येक बार हमारा छोटा-सा स्कूल विजयी हुआ. अंत में सेमी-फाइनल में एक बहुत अच्छी टीम को हराता हुआ हमारा स्कूल फाइनल अर्थात् अंतिम मुकाबले में पहुंच गया.

उस दिन शायद शनिवार था. लड़कों के उत्साह का पारावार न था. अब हमें जिले की सब से बड़ी ट्राफी को जीतने के लिए केवल एक टीम को परास्त करना था और वह थी जानकीदास हाई स्कूल की पिछले साल की विजयी टीम. खेलने के लिए हमारे ही स्कूल का खेलने का मैदान उपयुक्त समझा गया.

विपक्षी टीम सुबह सात बजे के लगभग स्कूल में आ पहुंची. उसके साथ टीम के इंस्ट्रक्टर श्री मेथी जी भी थे, जिन्हें मैं बहुत पहले से जानता था. हम दोनों ने अपनी टीम को तैयार करने में कसर न रखी थी और देखा जाए, तो मुकाबला हम दोनों के बीच था.

अजीत उस दिन बार-बार अपने खिलाड़ियों को कुछ न कुछ निर्देश देता घूम रहा था. मुझे उसके इस व्यवहार पर गर्व था और प्रिंसिपल महोदय भी मुझे कई बार आकर कह गए थे कि मैं देख लूं कि खिलाड़ियों को किसी अंतिम सलाह की आवश्यकता तो नहीं.

खेल के लिए मुझे और मेथी जी को 'एम्पायर' नियुक्त किया गया. 'एम्पायर' वे होते हैं, जो खेल के मैदान में खड़े होकर यह देखते हैं कि दोनों टीमें नियमों का सही पालन कर रही हैं या नहीं. इसके अतिरिक्त वे यह भी निर्णय देते हैं कि कौन आउट हुआ और किसने गलत बॉल फेंकी.

ठीक नौ बजे दोनों दलों के लड़के मैदान में उतर आए. दोनों ओर के कप्तानों ने सिक्का उछालकर फैसला किया कि कौनसा दल पहले खेलेगा. टॉस अजीत ने जीता और निश्चय किया गया कि पहले जानकीदास

वाले खेलेंगे और रन बनाएंगे. उनके सभी खिलाड़ियों के आउट हो जाने पर फिर हमारा दल रन बनाएगा.

खेल आरंभ हुआ. पहली पारी में विपक्षी टीम ने एक सौ छत्तीस रन बनाए. उनका कप्तान रणधीर नाम का एक लंबा और पतला लड़का था. उसके खेलने के ढंग ने और आत्मविश्वास ने मुझ पर भी प्रभाव डाला. उसने अकेले पचपन रन बनाए.

फिर हमारी टीम खेली और दिन में खाने की छुट्टी के लगभग एक घंटे बाद जब सब लड़के आउट हुए, तो हमारी रन-संख्या एक सौ बीस के आसपास थी.

दूसरी पारी में विपक्षी टीम ने अद्भुत खेल दिखाया और धड़ाधड़ रन बनाए. उनके खिलाड़ियों ने हमारे द्वारा फेंकी गई प्रायः सभी खतरनाक बॉलों को पीटा और मैदान की सीमा से बाहर फेंक दिया. परंतु जब उनके खिलाड़ियों ने एक-एक करके आउट होना शुरू किया, तो जल्दी ही लगने लगा कि मैदान हमारे हाथ है.

जब सब आउट हुए, तो मैच जीतने के लिए हमें अस्सी रन बनाने थे और हमारे पास पर्याप्त समय था.

●

हमारा खेल आरंभ हुआ. 'अज्जू' अपने एक अच्छे बल्लेबाज के साथ मैदान में उतरा. जीत इतनी निकट लग रही थी कि मैदान के चारों ओर बैठे लड़के अपनी टीम को बढ़ावा देने के लिए चिल्लाए जा रहे थे.

जानकी दास स्कूल से भी बहुत संख्या में लड़के आए थे. वे भी शोर मचाने में पीछे न थे.

जब मैदान में एक कोने में रखा ब्लैक बोर्ड, जिस पर रनों की संख्या लिखी जा रही थी, बता रहा था कि हमारे स्कूल को जीतने के लिए अब बयालिस रनों की आवश्यकता थी, और हमारा खयाल था कि हम अगर निर्धारित समय के अंदर इतने रन न भी बना पाए, तो भी कोई बात न होगी; क्योंकि ऐसी हालत में शील्ड पर दोनों टीमों का अधिकार हो जाएगा. तभी एकाएक पासा पलट गया.

अजीत के साथ खेलने वाले खिलाड़ी ने बॉल को बिना कुछ समझे-बूझे हवा में उछाल दिया. बॉल हवा में ही लपक ली गई और आउट खिलाड़ी को मैदान से बाहर जाना पड़ा. उसके स्थान पर जो खिलाड़ी आया, वह भी अधिक देर न टिक सका और तीसरे खिलाड़ी ने तो आते ही वापस लौटने का इंतजाम कर लिया.

कुछ समय पहले जो विजय निकट दिखाई दे रही थी, अब आंखों से ओझल होती जा रही थी.

मैं और मेघी जी मैदान में खड़े खेल को सही रूप में खिला रहे थे. वैसे इस समय हम दोनों ही किसी भी टीम के न होकर एक तटस्थ जज के समान थे, जिसके लिए सब बराबर होते हैं. परंतु न जाने कैसे मेरे दिल में यह विचार समाता जा रहा था कि कैसे भी हो मेरे स्कूल को यह हार बचानी है. मैंने इशारों ही इशारों में 'अज्जू' को यह समझाने का प्रयत्न किया कि वह भूल न करे और रन बनाने के चक्कर में न पड़े. अगर वह आउट हुआ, तो कम से कम यह हार तो बच ही जाएगी.

धीरे धीरे ग्यारह खिलाड़ियों में से सात सबसे अच्छे बल्लेबाज आउट हो गए. हमें अभी भी बाइस रन बनाने थे और आधा घंटे का समय बाकी था. बेचारा अजीत अकेला इस हार को बचाने का प्रयत्न कर रहा था. वह पसीने से लथपथ था और उसकी सांस बुरी तरह फूली हुई थी. विपक्षी दल के सभी खिलाड़ी उसे आउट करने के जी-तोड़ प्रयत्न में लगे थे.

'खट्!' बहुत हल्की-सी आवाज हुई और मैंने देखा एक तेज बॉल जो उसकी ओर फेंकी गई थी उसके बैट से लगकर पीछे खड़े हुए उस खिलाड़ी के हाथों में चली गई जिसे 'विकेट-कीपर' के नाम से जाना जाता है.

मैदान में खड़े हर खिलाड़ी ने यह सोचकर कि अजीत आउट हो चुका है, उछलना और चिल्लाना आरंभ कर दिया. वे उछल रहे थे और सीटियां बजा रहे थे.

परंतु फिर भी यह आवश्यक था कि दोनों एम्पायरों में से एक इस बात का निर्णय देता कि खिलाड़ी आउट हो चुका है या नहीं. निर्णय देने का भार मुझ पर था. मैंने अजीत की ओर देखा. उसकी आंखें कह रही थीं—'गुरु जी, मुझे आउट घोषित करने की गलती न कीजिएगा. इस टीम के पास अब शील्ड आएगी, तो उसका सम्मान आपको भी मिलेगा.'

मैंने संकेत से निर्णय दिया खिलाड़ी आउट नहीं है, खेल जारी रखा जाए.

फिर तो जैसे मैदान के अंदर और उसके बाहर चारों ओर भूकंप आ गया. विपक्षी दल के लड़के बिगड़ उठे और उन्होंने चिल्लाना आरंभ कर दिया. लड़के पैर पटक रहे थे और आगे खेलने से इंकार कर रहे थे. मैदान के बाहर विपक्षी टीम के हिमायती मुझे बाहर निकल जाने का आदेश दे रहे थे.

●

इस सब का जब मुझ पर कोई असर न हुआ, तो कुछ खिलाड़ियों ने विकेट उखाड़ फेंकीं और विकेट कीपर ने अपने दस्ताने उतार दिए. मेघी जी भी लड़कों को अनुशासन में न रख पाए. इसी बीच एक लड़का मेरे पास आ खड़ा हुआ. वह काफी ताकतवर था और शक्ल से दादा टाइप लगता था. उसने मुझे धमकी दी कि वह मुझे मैदान से बाहर समझेगा और इसका बदला लेगा. यह बात उसने बहुत दबी जबान से कही थी, परंतु इससे पहले कि मैं उसे कुछ कह सकूं, जानकीदास स्कूल के कप्तान रणधीर ने स्थिति को अपने हाथों में ले लिया. इस दुबले-पतले से लड़के ने जिस चतुराई और साहस से अपने खिलाड़ियों पर नियंत्रण किया, उससे मैं दंग रह गया. सबसे पहले वह उस लड़के पर गरज पड़ा जिसने मुझे धमकी दी थी—"संतू, तुमने इस मैदान का अनुशासन तोड़ा है. इसके अतिरिक्त तुमने एम्पायर का अपमान भी किया है. या तो तुम इनसे माफी मांगो या इसी समय मैदान से बाहर चले जाओ!"

लड़के ने विरोध करना चाहा, परंतु उसकी एक न चली. लड़के को मैदान छोड़कर जाना पड़ा.

रणधीर ने इसके बाद सभी खिलाड़ियों को मैदान में अपने स्थान पर खड़े होने का आदेश दिया और मुझसे बहुत आदर से कहा—"सर, आप खेल आरंभ करवाइए. आपका जो समय नष्ट हुआ है उसे भी हम पूरा करने का प्रयत्न करेंगे." और अगली बॉल फेंकने के लिए विकटों के पास जा खड़ा हुआ.

मेरे हृदय में ग्लानि और लज्जा के भाव पैदा हो गए थे. मैं सोच रहा था कि एक तो मैं अध्यापक हूं और दूसरे मैं यहां इसी लिए तैनात किया गया हूं कि देखूं कि खेल नियमों के अनुसार खेला जा रहा है कि नहीं. पर इन सब में से मैंने कुछ भी नहीं किया था.

पहली बॉल फेंकी गई. बाल बहुत धीमी गति से अजीत के बैट के पास उछली. मैंने सोचा इतनी अच्छी बॉल को अजीत पूरी शक्ति से मारेगा. पर यह क्या? उसने आगे बढ़कर बॉल को बैट से रोकने के बजाय टांगों पर बंधे पैड से रोक लिया. इसके बाद अपने स्थान से हटकर वह मेरे पास आया. बोला—"सर, मैं आउट था. मैं आगे नहीं खेलूंगा!" फिर वह मैदान से बाहर चला गया. विपक्षी दल के लड़के भी हक्के-बक्के उसे देख रहे थे. खेल फिर आरंभ हुआ, पर कुछ ही मिनिटों में समाप्त हो गया. हम चौदह रनों से हार गए थे.

बाद में छोटा-सा समारोह हुआ, जिसमें आनकीदास स्कूल को शील्ड प्रदान किया गया. एक शील्ड और कुछ कप हमें भी द्वितीय रहने पर मिले थे. परंतु सब को इस प्रकार कुछ रनों से हमारे हार जाने का अफसोस था.

सब कुछ समाप्त हो जाने के बाद अजीत मेरे पास आया और बोला—"सर, मुझे माफ कर दीजिए. मेरे कारण आपको इतनी बात सुननी पड़ी. मुझे आउट होते ही बैट छोड़ देना चाहिए था. इसके अतिरिक्त मैंने आपके द्वारा दिए गए निर्णय के विपरीत भी. . ."

"खैर, वह सब छोड़ो. एक बात मैं जानना चाहूंगा. बताओ, तुम आज इतने बदल कैसे गए? मैंने तो यही सुना था कि बिना बेईमानी किए तुम्हारा जी ही नहीं मानता. आज तो तुम्हें मौका भी अच्छा मिला था!"

"सर, आप ठीक कहते हैं. मैं खेलते समय हमेशा बेईमानी करता हूं. मैं यही सोचता था कि खेल कैसे भी जीता जाना चाहिए. इसी लिए मेरी सब से लड़ाई होती थी. पर आज उस लड़के रणधीर को देखकर लगा कि मैं कप्तान होने योग्य भी नहीं हूं. सर, रणधीर तो खेलना ही नहीं खिलाना भी जानता है!"

मैं चुप रहा. आज रणधीर जीता था और इस कारण उसका दल जीता था. 'अज्जू' भी आज हारा नहीं था और इसी लिए उसके दल की भी हार नहीं हुई थी. पर हममें से एक हार गया था बहुत बुरी तरह. वह कौन था? ●

एलिफेंटा, २२ रायपुर रोड, देहरादून.

छोटी छोटी बातें—

—सिम्स

क्यों, क्या परेशानी है? क्या तुम्हें स्कूल जाना पसंद नहीं?

नहीं, यार, स्कूल जाना भी पसंद है और स्कूल से आना भी, लेकिन वहां ठहरना पसंद नहीं!

"हलो. . .डबल टू फाइव सिक्स फाइव नाइन."

"मे आई स्पीक टू मिस्टर जगदीश नारंग?"

"वह तो आजकल 'आउट आफ स्टेशन' हैं."

"कहां गए हैं?"

"जालंधर."

"किस लिए?"

"माफ कीजिए, आप बोल कौन साहब रहे हैं?"

"यू डैमफूल! एक सी. आई. डी. इंस्पेक्टर के लिए अपना नाम बताना जरूरी नहीं होता. तुम कौन बोल रहे हो?"

"जी. . .जी, मैं जगदीश नारंग का लड़का दीपक हूं."

"तो, बेटा दीपक, जरूरत से अधिक चालाक बनने की कोशिश न करो. जो पूछा जाए, ठीक ठीक जवाब दो. और हां, भविष्य में डैडी का नाम बताने से पहले 'श्री' लगाना न भूलना. जालंधर क्यों गए हैं तुम्हारे डैडी?"

"आप एक मिनिट होल्ड कीजिए, मैं मम्मी को बुला देता हूं."

"मम्मी को कष्ट देने की जरूरत नहीं है. स्मगलिंग का केस मेरे सामने है और उसमें पकड़े गए अपराधियों ने तुम्हारे डैडी का भी नाम लिया है. तुम्हारी मम्मी को यह सब सुनकर सदमा लग सकता है. तो तुम्हारे डैडी जालंधर क्यों गए हैं?"

"ज ज. . .जी, डैडी दीदी के लिए लड़का देखने जालंधर गए हैं."

"पहले क्या तुम्हारे मुंह में दही जमा था! तुम्हारे पास अपनी कार है?"

"जी हां. . .जी हां. . ."

"मकान अपना है?"

"जी हां."

"क्या तुम बता सकते हो कि तुम्हारे डैडी ने इतना पैसा कैसे बना लिया?"

"जी, वह बिजनेस करते हैं."

"कौन-सा बिजनेस? टैक्स-चोरी और स्मगलिंग का?"

"जी नहीं. . .कपड़े का."

"तो तुम्हारे डैडी बजाज हैं?"

"जी हां. . .जी नहीं. . .मेरा मतलब है, हमारी दूकान कनाट प्लेस में है."

"कनस्तर के ककड़! कपड़े की दूकान कनाट प्लेस में हो या कूचा पातीराम में, दूकानदार तो बजाज ही कहलाएगा!"

"जी, हमारी दूकान पर छह सेल्समैन हैं."

"तो स्मगलिंग की साड़ियां बेचने के लिए तुम्हारे डैडी के पास दूकान है और पूरा गैंग भी! दीपक, मुझे

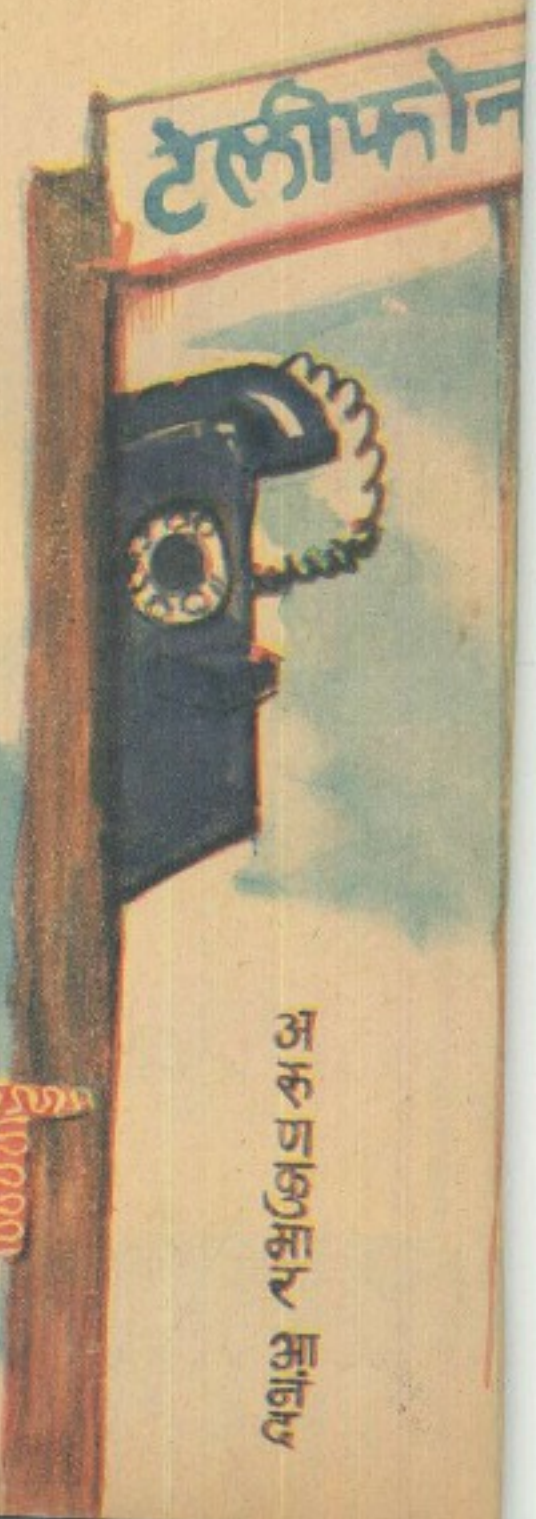

कहानी kissekahani.com

टेलीफोन

अरुणकुमार आनंद

दुःख है कि अब इंक्वायरी के लिए मुझे पुलिस वाला तरीका इस्तेमाल करना पड़ेगा."

"पुलिस वाला तरीका!"

"हाँ, शाम को साढ़े पांच बजे मेरी जीप तुम्हारे घर के आगे रुकेगी. मुझे घर का दरवाजा सपाट खुला मिले. मिलेगा?"

"जी...जरूर."

"गुड! घबराने की जरूरत नहीं है. यदि तुम्हारे बेटे निर्दोष हैं, तो हमें भी उन्हें जेल में सड़ाने का शौक नहीं है."

"जी...ठीक है."

"तो ठीक साढ़े पांच बजे. मैं दो मिनिट आगे-पीछे हो सकता हूं. अधिक नहीं...आलराइट...थैंक्यू...बाई-बाई!"

रिसीवर रखने के बाद गोपी और राम बहुत देर तक हंसते रहे. हंसी का आवेग कुछ हल्का पड़ा, तो गोपी ने

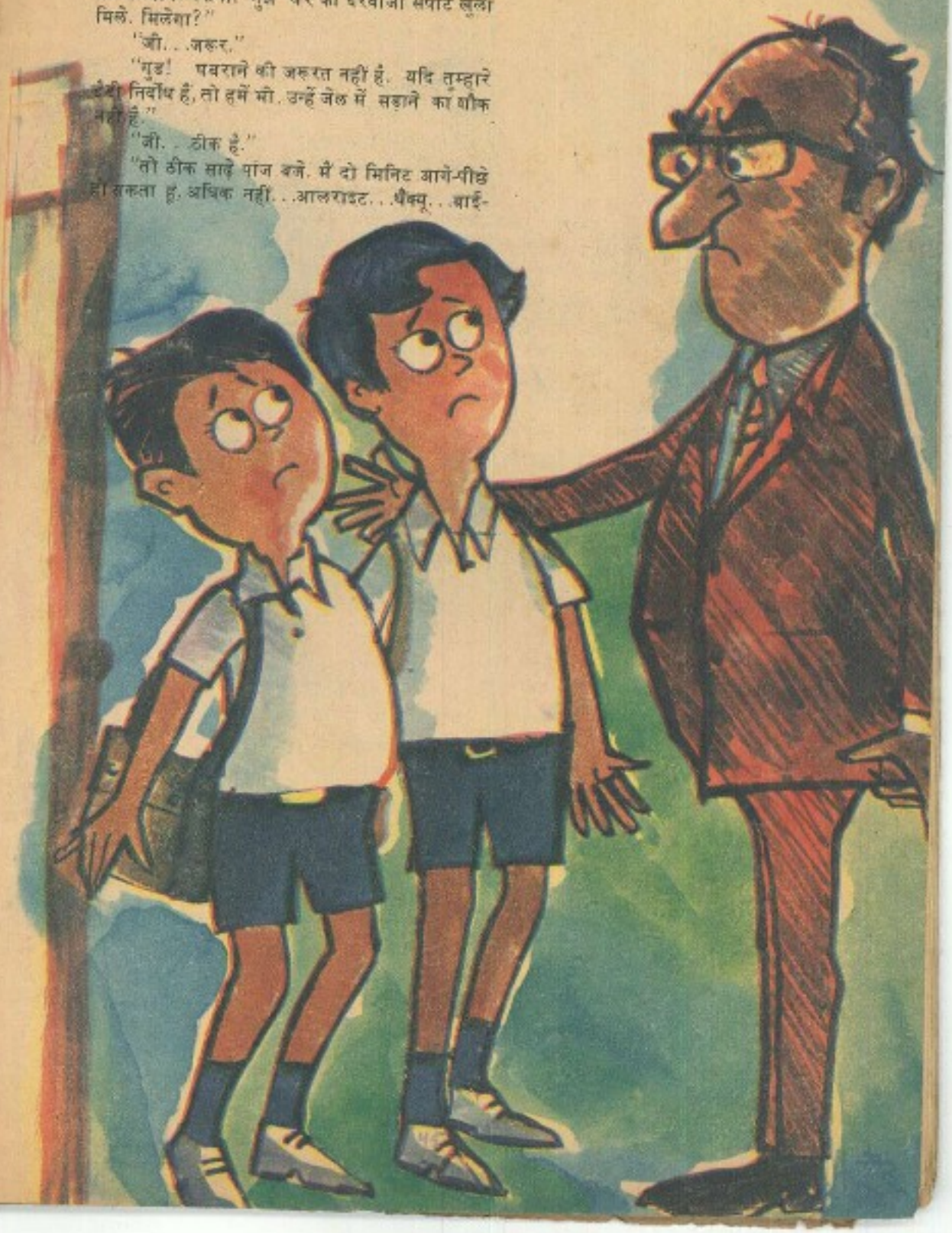

कहा—"खूब उल्लू बनाया पट्ठे को! ऐसे बोल रहा था जैसे सहमा हुआ चूहा हो. साढ़े पांच बजे तक बन्नू का दम फूला रहेगा."

दोनों इस समय स्कूल की इमारत के बाहर बने पब्लिक-बूथ में बंद थे. उन्होंने बिना पैसे डाले फोन करने का एक ढंग खोज निकाला था. फोन के डिब्बे के कोने में से एक लोहे की पत्ती घुसेड़कर दबाने से अंदर का लीवर दब जाता था और फोन का कनेक्शन जुड़ जाता था. इस खोज के बाद दोनों के दिमाग में फोन पर लोगों को परेशान करने की स्कीमें निरंतर पनपने लगी थीं.

गोपी ने डायरेक्टरी खोलकर किसी भले आदमी का नंबर ढूंढा और राम ने उसे फोन खटखटाया—'बॉस! हम सपने में हैं. सारे हीरे छुपा दीजिए; पुलिस अड्डा घेरने वाली है!' गोपी ने एक रेस्टोरेंट को आर्डर दिया—'हमारे यहां पार्टी चल रही है. कोका-कोला की बोतलें कम पड़ गई हैं. तुरंत एक टैक्सी में दस केट कोका-कोला, नं. ७ हेलीरोड के पते पर भिजवा दीजिए. टैक्सी का किराया हम देंगे.' राम ने फोन पर एक टाल वाले को लताड़ा—'आगे से तेरी दूकान पर हम थूकने भी नहीं आएंगे. तेरी लकड़ियां सुलगने से पहले धुआं देती हैं!'

●

प्रार्थना हो चुकी थी. प्रिंसिपल साहब मंच पर चढ़े. लड़कों में शांति छा गई. प्रिंसिपल साहब मंच पर विशेष अवसरों पर ही तशरीफ लाते थे—तब, जब उन्हें कोई गंभीर बात कहनी हो. अब भी उन्होंने अपनी प्रभावशाली और जोरदार आवाज में कहना शुरू किया—

"मेरे पास टेलीफोन विभाग से एक शिकायत आई है कि हमारे स्कूल की इमारत के बाहर लगाए गए पब्लिक फोन का दुरुपयोग किया जाता है. पिछले महीने यहां से जितने फोन किए गए, उसका चौथाई हिस्सा पैसे भी डिब्बे में से नहीं निकले. टेलीफोन वाले इस बात को नजरअंदाज कर सकते हैं, किंतु इस पब्लिक बूथ से लोगों को परेशान करने के लिए गुमनाम फोन किए जाते हैं. यदि यही स्थिति रही, तो वे यह बूथ खत्म कर देने पर विवश हो जाएंगे.

"मैं तुम लोगों को यह नहीं बताना चाहता कि कितने प्रयत्नों और पत्र-व्यवहार के बाद हमने लड़कों के लिए यह सुविधा प्राप्त की है. मैं यही कहूंगा कि विद्यार्थी इस सुविधा का दुरुपयोग न स्वयं करें और न दूसरों को करने दें. इस पब्लिक बूथ को यहां लगवाने में जितना कष्ट हमें उठाना पड़ा था, इसे हटाने के लिए उसका सौवां हिस्सा कष्ट भी टेलीफोन विभाग वालों को नहीं करना पड़ेगा. मुझे विश्वास है यह चेतावनी तुम्हारे लिए पर्याप्त होगी."

गोपी और राम ने एक-दूसरे की तरफ कनखियों से देखा और अर्थ भरी मुस्कान से उनके होंठ गोल हो गए.

●

इसमें कोई संदेह नहीं कि जितने भी विषय अध्यापकों ने पढ़ाने के लिए खोजे हैं इतिहास उनमें सबसे अधिक कठिन है. छह जार्ज, आठ एडवर्ड, आठ हेनरी इंगलैंड के इतिहास में गुजरे हैं. भारत का इतिहास लड़ाई-झगड़ों से भरा पड़ा है. पानीपत जैसी छोटी जगह में तीन लड़ाइयां हो चुकी हैं और तीनों की तीनों प्रसिद्ध! पता नहीं, कौन-सी परचे में आ टपके? इसलिए इतिहास रटवाने के लिए मास्टर हरीराम यदि विद्यार्थियों के फूल से कोमल शरीरों को थोड़ा कष्ट पहुंचाते थे, तो अपनी समझ में कोई गलत काम न करते थे.

गोपी और राम की मम्मियां उन्हें रोज समझाती थीं—'बेटा, न स्वयं लड़ो और न दूसरों के लड़ाई-झगड़ों में दिलचस्पी लो.' राम-गोपी की जोड़ी इस आज्ञा का अक्षरशः पालन करती थी और उन्होंने इतिहास तक के लड़ाई-झगड़ों में कभी रुचि न ली थी.

एक सुबह का पूरा घंटा टेलीफोन की भेंट चढ़ा कर जब यह जोड़ी कक्षा में घुसी, तो सीधी त्रिपाठी जी के हत्थे चढ़ गई. त्रिपाठी जी पूछ बैठे—"सन् १७७९ क्यों प्रसिद्ध है?"

दोनों को इतना तो याद आया कि इस सन् में अंग्रेजों ने कोई किला घेरा था, लेकिन किला कहां था, कितना बड़ा था, किसका था और क्यों घेरा गया था—इसका उत्तर दिमाग से नदारद था.

त्रिपाठी जी ने सोचा कि शायद उनके दिमागों को उल्टा करने से कुछ ज्ञान टपक पड़े, इसलिए उन्होंने दोनों को मुर्गा बना दिया और पूरा पीरियड मुर्गा बनाए रखा. लेकिन उन दो मुर्गों ने आपस में श्रीमी कुकड़ू-कूं करके जो स्कीम तैयार कर ली, उससे त्रिपाठी जी और कक्षा एक दम अनजान थी.

●

जब भगवान देने पर आता है तो, स्कूल की छुट्टी भी जल्दी करवा सकता है. आठवां पीरियड खाली था. कक्षा एक पीरियड पहले छूट गई.

जब राम-गोपी टेलीफोन बूथ पर आए, तो बूथ खाली पड़ा था. दोनों अंदर जा घुसे.

पहले राम ने एक टैक्सी स्टैंड को फोन किया—"मैं रामजस हायर सेकंडरी स्कूल से बोल रहा हूं. इतिहास का टीचर—हरीराम त्रिपाठी. हम चालीस लड़कों को लेकर पुराना किला देखने जा रहे हैं. ठीक एक बजे दस टैक्सियां स्कूल भिजवा दीजिए. . जी हां. . .हम गेट के पास खड़े मिलेंगे. . ."

गोपी की स्कीम ज्यादा जानदार थी. उसने अपने ही स्कूल के प्रिंसिपल को फोन किया—"कृपया श्री हरीराम त्रिपाठी को बुला दीजिए."

"आप कौन बोल रहे हैं?" प्रिंसिपल साहब की गंभीर आवाज फोन पर साफ पहचानी जा सकती थी.

"मैं त्रिपाठी जी के मुहल्ले से बोल रहा हूं—आर. एम. गुप्ता."

"देखिए, गुप्ता जी, त्रिपाठी जी तो इस समय क्लास ले रहे हैं. आप उनके लिए संदेश दे सकते हैं."

"जी, ऐसा है कि उनकी छोटी मुन्नी छज्जे पर से गिर पड़ी है. उनका तुरंत घर पहुंचना जरूरी है."

"ओह! मैं उन्हें फोन पर बुला देता हूं. आप एक मिनिट होल्ड कीजिए."

"जी अच्छा!"

•

दोनों को पता भी नहीं चला कब बिल्ली की तरह दबे पांव आकर प्रिंसिपल ने बूथ का दरवाजा खोला और गोपी-राम की जोड़ी को आ दबोचा, यानी बाहर खींच लिया. जेब से एक नोट-बुक निकालकर वह बोले—"आपके शुभ नाम?"

"सर...सर..."

"शुभ नाम?" प्रिंसिपल ने इस ढंग से पूछा मानो वह शहर के दो सम्माननीय सज्जनों से बात कर रहे हों.

उन्होंने अपने नाम बताए, कक्षा भी. यह विवरण नोटकर प्रिंसिपल ने मुस्कराकर कहा—"मि. गोपी और मि. राम! आपने फोन करने से पहले यह तो पता कर लिया होता कि त्रिपाठी जी गांव में रहते हैं जहां असली टेलीफोन तो एक तरफ, किसी बच्चे के पास खिलौने वाला टेलीफोन भी नहीं है. भगवान भला करें, त्रिपाठी जी की तो अभी शादी ही नहीं हुई, मुन्नी कहां से आ गई!"

राम और गोपी दोनों को जमीन घूमती दीख रही थी.

एकायक स्कूल के बाहर एक के बाद दस टैक्सियां आ खड़ी हुईं. उनके सुरीले हार्न वातावरण में गूंजने लगे. प्रिंसिपल साहब तब दोनों लड़कों को अपने ऑफिस की तरफ ला रहे थे. एक टैक्सी ड्राइवर ने उनसे त्रिपाठी जी का नाम लेकर सारा माजरा बताया. मामला आसानी से सुलझ गया. सिर्फ साठ पैसे प्रति टैक्सी के हिसाब से छह रुपये राम और गोपी की जेबों से निकल गए!

•

अगले दिन प्रार्थना के बाद राम और गोपी को मंच पर सुशोभित किया गया. प्रिंसिपल ने संक्षेप में उनकी करतूतों का वर्णन किया और फिर दोनों 'सज्जनों' ने अपने कारनामों के लिए पूरे स्कूल के सामने माफी मांगी.

उसके बाद से कभी टेलीफोन विभाग से किसी किस्म की कोई शिकायत न आई. •

९।६६५० देवनगर, नई दिल्ली–५.

बुद्धूराम—

—सुरती

बंगला कहानी

गहरे पानी की मछली

kissekahani.com

— स्वपनबूड़ो

उस दिन कक्षा में भूगोल पढ़ाते-पढ़ाते मास्टर साहब ने गहरे पानी की मछलियों को पकड़ने के संबंध में कई मजेदार बातें बताईं. उनमें से एक यह भी थी कि किस तरह जहाज के ऊपर से ही यंत्र और जाल की सहायता से गहरे पानी की मछलियों को पकड़ा जाता है. ब्लैक बोर्ड पर उसका चित्र भी बनाकर हमें दिखाया. कहना नहीं होगा कि उन सब मजेदार बातों को सुन-सुनकर हम सब पढ़ने वालों की प्रसन्नता का कोई अंत नहीं था.

अचानक पीछे की बेंच पर से एक लड़का उठकर बोला—"सर, हमारी इस क्लास में भी एक 'गहरे पानी की मछली' है! उसको तो किसी तरह भी नहीं पकड़ा जा सकता!"

बहुत से नए लड़कों के लिए यह खबर बिलकुल नई और विचित्र थी. इसलिए उनमें से कई पूछ ही बैठे—"गहरे पानी की मछली? वह भला कौन है?"

लेकिन उस लड़के की तरफ से इसका उत्तर नहीं दिया गया. मास्टर साहब ने बीच में ही उसे डांट दिया—"कोई भी बदमाशी नहीं करेगा, चुपचाप सब लोग अपनी अपनी सीटों पर बैठे रहो."

कुछ भी हो, यह बात क्लास के सभी लड़के जानते थे कि पीछे की बेंच से जो लड़का मजे के साथ 'गहरे पानी की मछली' के नाम की घोषणा कर रहा था, उसका मतलब था 'खोदन' से.

यह खोदन है सारे स्कूल में सब से बदमाश लड़का. कहना नहीं होगा, स्कूल के सभी लड़के उसे जानते हैं और इसी कारण उसका नाम भी रख छोड़ा है—'गहरे पानी की मछली.'

नए आए मास्टर साहब इन सब बातों को नहीं जानते थे. उन्होंने इसे महज लड़कों की शैतानी भर समझा. लेकिन लड़कों को 'गहरे पानी की मछलियों' के बारे में बताते-बताते उन्होंने कक्षा में एक चिनगारी भी लगा डाली थी, यह वह नहीं समझ सके.

क्लास में आग उसी दिन नहीं फैली. आग फैली इस घटना के अगले दिन.

वह लड़का, जिसने पिछले दिन मजे के साथ 'गहरे पानी की मछली' के नाम की घोषणा की थी, दूसरे दिन लंगड़ाते-लंगड़ाते क्लास में हाजिर हुआ.

"क्यों, क्या बात है? क्या हुआ?" क्लास के तमाम लड़कों ने उसे घेर लिया.

बात बड़ी ही साधारण थी. स्कूल की छुट्टी के पश्चात् किताबों का बस्ता लेकर जब वह घर की तरफ जा रहा था, तो क्लास में हुई घटनाओं को वह पूरी तरह भूल चुका था.

रास्ते में आम का एक बड़ा-सा पेड़ था. उसके नीचे जाते ही अचानक ऊपर से ठीक गोली की तरह आकर, ईंट का एक बड़ा-सा टुकड़ा उसके पैरों पर लगा. कहना नहीं होगा, वह लड़का इसी कारण लंगड़ा-लंगड़ाकर चल रहा था.

क्लास के लड़कों को समझते देरी नहीं लगी कि यह बदमाशी किसकी हो सकती है. लेकिन मुंह से किसी ने भी उसका नाम नहीं लिया. आखिर एक बात तो वे भी मानते हैं कि 'गहरे पानी की मछली' के लिए मुश्किल तो कुछ भी नहीं है. कब वह किसपर अपनी विचित्र दया कर बैठे, कोई नहीं जानता.

खोदन उस दिन कुछ देरी से क्लास में आया. थोड़ी ही देर में वह सभी के साथ हंस-हंसकर बातें करने लगा. तभी अचानक उस लंगड़े पैर वाले लड़के की तरफ उसकी नजर गई. उसको सुनाकर बोला—"यह क्या है रे, लंगड़े होकर काहे को चल रहे हो? किसके घर की रसोई में घुसे थे रात चोरी करने के लिए?"

मन ही मन मारे गुस्से के लड़का कांप-सा उठा. लेकिन मुंह से उसने कुछ नहीं कहा. इस दुष्ट का क्या विश्वास, कब क्या कर बैठे, कोई ठीक थोड़े ही है.

खोदन की कार्य-प्रणाली भी कुछ इसी ही तरह की है. यदि वह कहता है कि मैं उत्तर की ओर जा रहा हूं, तो जरूर उसे उत्तर को छोड़कर किसी और ही दिशा में देखा जा सकता है.

अब उसी दिन की बात है. खोदन बोला—'हम लोग मैच देखने के लिए गांव से बाहर जा रहे हैं. तीन दिन पश्चात् वापस आएंगे.'

लेकिन एक दिन बाद ही देखा गया कि बलेटू के बगीचे के तमाम पके हुए नींबू रातोंरात गायब हैं.

पेड़ों के नीचे एक कागज पाया गया, जिस पर लिखा था—'नष्टचंद्र का नमस्कार!' और ठीक तीन दिन

बाद देखा गया कि वह एक फुटबाल लेकर गांव में हाजिर है.

बोला—'बड़ा ही शानदार खेल हुआ. लेकिन हम लोग शील्ड नहीं जीत सके.'

इसी तरह की एक और घटना लड़कों को याद है.

मल्लिकों की बाड़ी में पूजा थी. मां काली के समक्ष चार बकरे बलि होने थे. रात पड़े पूजा का लग्न था.

पुरोहित ठाकुर रात भर जगकर पूजा करता रहा था. लग्न का समय होने पर उन्होंने ढोल बजाने वालों को आवाज दी. लेकिन बाहर से उन्हें कोई भी उत्तर नहीं मिला.

पुरोहित उठकर स्वयं बाहर आए. लेकिन यह देखकर उनके आतंक का कोई ठिकाना नहीं था कि दोनों ढोलकियों को किसी ने हाथ-मुंह बांधकर गिरा दिया था. केवल यही नहीं, एक और भी कांड हो गया था. इसी बीच वे चारों बकरे जो बलि पर चढ़ाए जाने वाले थे, वहां से गायब थे!

पुरोहित ठाकुर की चिल्लाहट सुनकर बहुतसे लोग इधर-उधर से बाहर आ गए, जो रात अधिक हो जाने के कारण बरामदों में पड़े नींद ले रहे थे. लेकिन उन चारों बकरों का पता नहीं लगना था, सो नहीं लगा.

इस घटना के पीछे भी 'गहरे पानी की मछली' छुपा हुआ था. बहुत से लोग इस बात को समझ चुके थे. लेकिन किसी में भी यह साहस नहीं था कि वह अपने सच्चे अनुमान को होंठों पर ला सके. कारण साफ था. सभी बाल-बच्चेदार थे और रास्ते चलते सांप को कोई भी खोंचा देकर नहीं छेड़ना चाहता था.

इस तरह इस 'गहरे पानी की मछली' की कितनी ही करामातें गांव के लोगों के मुख पर हैं. उनको यदि पुस्तकाकार छापा जाए, तो जरूर ही बड़ी ही मजेदार पुस्तक साबित होगी, इसमें कोई संदेह नहीं.

●

काफी दिनों से गांव में कोई हंगामा नहीं हुआ था. सभी आराम की नींद सो रहे थे. लेकिन अचानक जैसे कीचड़ में पत्थर आकर गिरा. घटना कुछ ऐसे हुई.

खोदन के दल के एक लड़के का नाम था बिटल. जैसा चेहरा था, वैसा ही स्वभाव. किसी भी दिन पुस्तक का एक भी पृष्ठ खोलकर देखने का कष्ट उसने नहीं किया था.

अंग्रेजी के मास्टर साहब एक दिन जब पढ़ाने आए, तो उन्होंने देखा कि बिटल अंग्रेजी की पुस्तक को उल्टी तरफ से पढ़ रहा था. गुस्से में आकर मास्टर साहब ने कह दिया—"तुम जिंदगी भर इस क्लास को पास नहीं

कर सकोगे. अच्छा हो पास के जंगल में जाकर तुम घास खाना प्रारंभ कर दो."

इसी बात को लेकर बिटल ने अपना अपमान समझ लिया. अपने मन के दुःख को जाकर उसने अपने मित्र खोदन को जा सुनाया.

खोदन की खबर को सुनकर आग बबूला हो उठा. अपमान! घोर अपमान! और वह भी खोदन के दल के ही एक सदस्य का! इसका बदला लेना ही होगा.

शायद इसी कारण 'गहरे पानी की मछली' खोदन ने अपने हिसाब से ठीक ही निश्चय किया कि इस वर्ष जैसे भी हो, बिटल को सारी क्लास में प्रथम स्थान दिलाना होगा. मास्टर साहब की धमकी को झूठ सिद्ध करने के लिए ही यह निश्चय किया गया था.

योजना कुछ इस तरह से बनी—

बिटल को पूरी तरह तैयार करके परीक्षा-संग्राम में भेजा जाए. जिस तरह के प्रश्न परीक्षा में आते हैं, उनकी एक लिस्ट तैयार करके पहले से ही उनका जवाब लिखकर रखना होगा. उन उत्तरों को छोटे-छोटे अक्षरों में लिखकर किसी को जूतों के तले में दबाकर, किसी को शर्ट के कालर के नीचे छिपाकर और किसी को पैंट के भीतर पिन लगाकर ले जाना होगा.

इतने पर भी यदि प्रश्न चूक जाए, तो प्रश्न-पत्र को पाते ही बिटल उसे खिड़की के रास्ते बाहर गली में फेंक देगा. वहां से खोदन के दल के लड़के हाथों हाथ उठा लेंगे. प्रश्न-पत्र पर ही उत्तर लिखकर लड़के पुनः उसे बिटल के पास फेंक देंगे.

स्कूल के चपरासी को भी पहले से ही हाथ में कर लिया गया था. जरूरत पड़ने पर उसके हाथ भी प्रश्नों के उत्तर बिटल तक पहुंचाए जा सकते थे. और इस तरह प्रत्येक परीक्षा में बिटल 'किला जीत लिया' कहते हुए बाहर निकलेगा.

देखता हूं, इस बार उसे फर्स्ट होने से कौन रोकता है? यह निश्चय कर प्रत्येक परीक्षा के प्रश्नों के अनुमानित उत्तर पहले से ही खोदन ने लिखने प्रारंभ कर दिए थे. आखिर इसमें उसकी नाक का सवाल जो था. इस युद्ध में जयलाभ करके उसे अपने दल की इज्जत रखनी ही होगी, क्योंकि बिटल का अपमान उसके सारे दल का अपमान है.

●

गहरी गंभीर रात.

बाहर बरामदे में एक लय से रात के पक्षियों का स्वर सुनाई दे रहा है. लेकिन आज खोदन की आंखों में नींद नहीं है.

बाहर के कमरे में खोदन अकेला बैठा है, क्योंकि रात को यह कमरा बिल्कुल शांत रहता है.

अचानक जोरों से वर्षा होने लगी. पेड़ों पर से गिरे

क्या तुम जानते हो?

—कि चिम्पंजी विपुच्छ कपियों (बनमानुषों) में सबसे छोटे आकार का होता है.

—कि कर्मिल पर्वत की बकरियों के कान इतने लंबे होते हैं कि प्रायः घुटने स्पर्श करते हैं.

—कि जेबरा प्रायः बीस से ले कर दो सौ तक के झुंड में रहता है. यही नहीं, बल्कि सब तरह के स्थिर शृंगी हरिण, शुतुरमुर्ग तथा जिराफ भी इनके दलों में मिले रहते हैं. इन सब का संघ प्रायः एकमात्र शत्रु सिंह से रक्षा पाने की इच्छा से एकत्र रहता है.

—कि स्पेन में जिस घोड़े को सजा देनी होती है, उसकी कलगी दूसरे घोड़े को पहना दी जाती है.

—कि मछलियां तो अपनी दुम को अगल-बगल चला कर आगे बढ़ती हैं, लेकिन व्हेलों को आगे बढ़ने के लिए अपनी दुम को ऊपर-नीचे चलाना पड़ता है.

—कि बैल के मुख में कच्चे और पक्के दांत गिनती में २४ होते हैं. कच्चे दांत एक महीने के बाद पूरे हो जाते हैं. डेढ़ साल की आयु से यह दांत गिरने लगते हैं और जोड़ी-जोड़ी बदलते हैं.

—कि मछलियां चिड़ियों की तरह अंडों को सेने की तकलीफ गवारा नहीं करतीं और वे पानी में अंडे देकर छुट्टी पा जाती हैं. इनके अंडे पानी में तैरा करते हैं और अपने-आप लगभग एक महीने में धूप से फूट जाते हैं.

—कि ईल मछली के अंडों के फूटने पर उनमें से छोटे-छोटे पारदर्शी बच्चे निकलते हैं, जो अंडों से बाहर होते ही पूरब की ओर चल पड़ते हैं.

—कि कुकुरजिभी मछलियों की दोनों आंखें सरक कर एक ही ओर हो जाती हैं.

—कि मछलियों के जीभ नहीं होती.

—कि चंद्रमा की तरह सूर्य पर भी काले धब्बे हैं. हर २१ वें वर्ष सूर्य में एक उबाल आता है और धब्बे भारी संख्या में प्रकट होते हैं. सूर्य के इन धब्बों का प्रभाव पृथ्वी पर भी पड़ता है. जब सूर्य पर अधिक धब्बे होते हैं तो पृथ्वी पर भारी विद्युत-चुंबकीय तूफान आते हैं.

—कुमारसंभव

सूखे पत्तों पर पानी की बूंदें पड़ने से आवाज होने लगी.

लेकिन खोदन को इन सबकी ओर देखने के लिए समय नहीं है. वह एक मन से 'किताबी कीड़े' की तरह अंग्रेजी, इतिहास, व्याकरण और भूगोल की पुस्तकों को पढ़ पढ़कर परीक्षा में आने वाले संभावित प्रश्नों के उत्तर एक कागज में नोट करता जा रहा है. यह सारा काम उसे आज रात को ही समाप्त करना है. क्योंकि कल उसे पास के गांव के लड़कों से क्रिकेट खेलने जाना है. उसमें भी उसे जयलाभ करना होगा.

बीच-बीच में नींद के मारे उसकी आंखें बंद-सी होती जा रही हैं, लेकिन खोदन प्रतिज्ञा पर अटल है. क्रम से पुस्तकों को खोलता है और द्रुतगति से पास पड़े कागजों पर कुछ लिखता जा रहा है.

अचानक दरवाजे पर ठक्-ठक् की आवाज हुई.

एक बार खोदन ने विचार किया, शायद वर्षा की बूंदें दरवाजे पर पड़कर आवाज कर रही हैं, उसी की यह ध्वनि है.

लेकिन यह बात नहीं थी. वास्तव में कोई दरवाजे पर खड़ा ठक्-ठक् की आवाज कर रहा था. भूतों का भय खोदन को आज तक कभी नहीं हुआ. सोचा, फिर इतनी रात गए वर्षा में भीगने के लिए कौन आया होगा?

जरूर वह बिटल ही होगा.

शायद देखने आया हो कि मैं वास्तव में काम कर रहा हूं या नींद में मस्त पड़ा हूं.

पैर दबाकर चलते हुए खोदन ने उठकर दरवाजा खोला. इस बार उसके अवाक् होने की बारी थी.

यह क्या! उसके क्लास के सनातन की मां! इतनी रात गए भला वह क्या करने यहां आई होगी?

खोदन ने सिर उठाकर देखा. सनातन की मां बिल्कुल भीग गई थी. सारे शरीर से पानी की बूंदें गिर रही थीं.

उसने पूछा—"मौसी, यह क्या? इतनी रात गए आप यहां क्यों आई हैं? सनातन पर क्या कोई विपद पड़ गई है?

सनातन की मां ने उत्तर दिया—"बेटा खोदन, तुमने ठीक ही अनुमान लगाया है. सनातन वास्तव में विपद में पड़ गया है और तुम्हीं उसकी रक्षा कर सकते हो."

"मैं ही उसकी रक्षा कर सकता हूं?" हैरान होकर खोदन ने कहा.

सनातन की मां बोली—"हां, बेटा खोदन, तुम तो जानते ही हो, हम कितने गरीब हैं. मैं घर-घर में चौका-बर्तन करके, अनाज कूट-पीसकर सनातन को आदमी बना रही हूं. सनातन सभी के आशीर्वाद से प्रति वर्ष क्लास में प्रथम स्थान पाता है. इस कारण उसे स्कूल से छात्र-वृत्ति मिल रही है, जिससे उसके पढ़ने का खर्च नहीं लगता. उसके मुंह की ओर देखकर ही मैं जी रही हूं. इस वर्ष यदि सनातन स्कूल में प्रथम नहीं आया, तो उसकी छात्र-वृत्ति बंद हो जाएगी. मैं उसे आगे नहीं पढ़ा सकूंगी. तुम्हीं सोचकर देखो, बेटा खोदन, ऐसी अवस्था में तालाब में डूबकर मर जाने के अलावा मेरे पास और कोई रास्ता नहीं रह जाएगा." कहकर आंसू-भरी नजरों से उसने खोदन की ओर देखा.

बाहर एक ही धार में वर्षा हो रही थी—झम्-झम्-झम्. खोदन ने एक बार वर्षा की ओर देखा और उसके बाद सनातन की मां के मुंह की ओर. कितनी समानता है दोनों में! एक अपनी शीतलता से दुनिया को शांति प्रदान करती है, तो दूसरी अपने लहू के कतरे-कतरे को एक बच्चे की जिंदगी संवारने में लगाए हुए है.

हठात् खोदन के मन में न जाने क्या विचार आया; सनातन की मां के पैरों की ओर झुकते हुए उसने कहा—"मौसी, तुम निश्चित होकर घर चली जाओ. इस बार भी सनातन को ही क्लास में प्रथम स्थान मिलेगा." कहकर उसने पास ही पड़े समस्त लिखे हुए कागज चिंदी-चिंदी करके गली में बह रहे पानी में फेंक दिए, जो कि कुछ ही देर में पानी की गहराई में लुप्त हो गए. ●

स्पष्टीकरण—

मालिक, पिछली जगह रसोइए का काम मुझे इसलिए छोड़ना पड़ा कि वहां मेरी दाल नहीं गलती थी!

अनुवादक : आशकरण कोचर, द्वारा श्री एस. एम. सेठिया, २—इंडिया एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता-१

मूल लेखक का पता : २५ राजेंद्रलाला स्ट्रीट, कलकत्ता-६

kissekahani.com

किंतु वह बहुत दुखी जान पड़ता है! उसके आंसू गिर रहे हैं!
मुझे उसकी गठरी वापस कर देनी चाहिए — ज्यादा चोरी-बदमाशी ठीक नहीं! मैं उसे कुछ पैसे भी दूंगा!
पांच दूं कि पच्चीस? पांच ही दिए देता हूं —
धाय!
मेरे सिर पर किसने घूसा मारा? — शायद यह काम मेरी आत्मा का है — ठीक है, मैं मुसाफिर को पच्चीस ही दूंगा!
गठरी ऐसे वापस रखी गई कि लंबू को खबर तक न हुई!
मुझे अब चलना चाहिए हाय, पास एक कौड़ी भी नहीं और मेले में जाना है!
फिक्र न करो, प्यारे! अभी एक चोर मुझे उठा ले गया था — मैंने उसे ऐसा घूंसा दिया कि पच्चीस रुपये देकर भागा!
खूब!

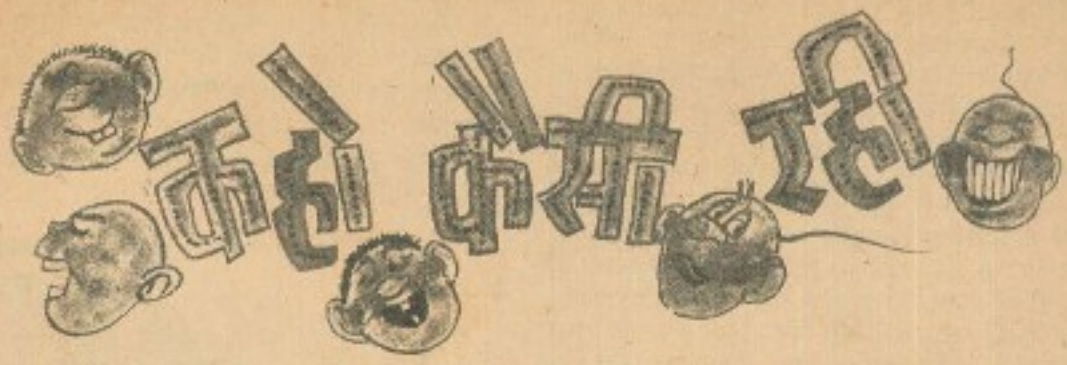

कुक्कू जब स्कूल से लौट कर आया, तो उसका उदास चेहरा देख कर मां ने पूछा, "क्यों, क्या बात है? क्या आज क्लास में मार पड़ी?"

"नहीं."

"किसी साथी से झगड़ा हुआ?"

"बिलकुल नहीं!"

"फिर आज तेरा चेहरा उतरा हुआ क्यों है?"

"मुझे सरकारी बस के ड्राइवर का बार बार खयाल आता है कि उस बेचारे का क्या होगा . . . ?"

"क्यों?"

"बस पर लिखा हुआ था 'दो या तीन बच्चे बस' और बस में बैठे हुए थे हम बीस बच्चे!"

•

श्रीमती सूरी अपने बच्चे के लिए खिलौना खरीदने एक दूकान में घुसीं. इधर-उधर देखकर उन्होंने दूर कोने की तरफ इशारा करते हुए सेल्स मैन से पूछा, "उस जापानी गुड्डे की क्या कीमत है?"

सेल्स मैन ने अपने मुंह पर उंगली रखते हुए धीरे से बोलने का इशारा किया और फुसफुसाहट में कहा, "वह जापानी गुड्डा नहीं, मैडम, इस दूकान का बौना मालिक है!"

•

गणेशचंद्र ने अपने बेटे छगनलाल से कहा, "बेटा छगन, आज कल का फैशन है कि जिस रंग के सिर के बाल हों, उसी रंग का सूट पहनना चाहिए. मसलन—अगर बाल काले हों तो काले रंग का सूट, भूरे हों तो भूरे रंग का सूट!"

छगन अपने बाप से उन्नीस थोड़े ही था. तुरंत बोला—"पिता जी, आपने ठीक कहा. लेकिन आपका सिर तो बिलकुल गंजा है, भला आपको किस रंग का सूट पहनना चाहिए!"

•

सर्दियों के दिन थे. आगरा के पागलखाने में दो बूढ़े पागल धूप में बैठे खुश-गप्पियां कर रहे थे.

पहला पागल कहने लगा, "जब मैं पंद्रह साल का हो जाऊंगा, तो सारी शैतानियां छोड़ दूंगा और फिर कभी अपने मम्मी-पापा को किसी चीज के लिए तंग नहीं करूंगा!"

"और जब मैं पैदा हूंगा," दूसरे पागल ने कहा, "तो बिलकुल नहीं रोऊंगा और अपनी मम्मी की नींद में खलल नहीं डालूंगा!"

•

एक बस स्टाप पर बस रुकते ही एक बुढ़िया चढ़ी; तभी घसीटाराम जी अपनी सीट छोड़कर उठ खड़े हुए.

बुढ़िया कहने लगी—"नहीं नहीं, आप बैठे रहिए." और घसीटाराम जी बैठ गए.

दूसरा स्टाप आने पर घसीटाराम जी फिर उठे और बुढ़िया के कहने पर फिर बैठ गए.

जब तीसरा स्टाप आया और बुढ़िया ने उन्हें फिर बैठने को कहा, तो घसीटाराम जी से बोले बगैर नहीं रहा गया. कहने लगे—"मुझे तो पहले स्टाप पर ही उतरना था. आपके कहने से दो स्टाप और आगे आ गया. अब कहां तक बैठा रहूं? मुझे भी तो अपने घर जाना है!"

•

"इतिहास की किताब की किसी भी लड़ाई की बाबत तुम्हें कुछ भी याद नहीं! आखिर वजह क्या है?" मास्टर जीवतराम ने कक्षा के छात्र बंटू से पूछा.

बंटू कहने लगा—"सर, मेरी मां मुझे रोज नसीहत देती हैं कि किसी के लड़ाई-झगड़े में पड़ने की जरूरत नहीं और कभी कोई तुमसे ही लड़ाई क्यों न कर बैठे, बेटा, उसे दिमाग से निकाल दिया करो!"

•

एक पल्टन के सैनिकों ने शिकायत की कि आज का खाना बिलकुल बेस्वाद और बासी है. उनके अफसर ने कहा, "यह खाना इतना अच्छा है कि अगर बाबर की सेना को दिया जाता तो वह सेना सारी दुनिया को जीत लेती."

एक सैनिक ने कहा, "आप ठीक फरमाते हैं, लेकिन यह खाना बाबर के जमाने में ताजा था!"

•

"आडर नाट बिलयर, कम पसनली!"

हसनअली के पास अंग्रेजी में तार आया. वह अंग्रेजी थोड़ी जानते थे, समझ गए कि 'कम' लिखा है, यानी बुलाया है. मगर यह 'पसनली' कौन है? बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने जवाब दिया—"प सनअली तो यहां कोई नहीं है, हसनअली आ रहा है!"

—टंडन

कहानी

पोस्ट कार्ड

kissekahani.com

पिता जी के नाम पर तो आए दिन पत्र आते हैं. आए दिन क्या हर दिन; कार्ड, अंतर्देशीय पत्र, लिफाफे. विदेशों से भी पत्र आते हैं. विदेश से आए किसी पत्र पर नवीन एलिजाबेथ का लाल टिकट सटा रहता है और किसी पर कैनेडी का नीला टिकट. मम्मी के नाम भी चौथे-पांचवें दिन पत्र आ ही जाता है. कभी उनके भाई का, कभी उनकी बहन का, कभी उनके साथ हाईस्कूल में पढ़ने वाली सहेली नीरजा का, जिसका फोटो उन्होंने एलबम में लगा रखा है. अशोक सबके पत्र देखता है. पत्रों पर लिखा पता पढ़ता है. किसी भी पत्र पर उसका नाम नहीं रहता. हां, किसी-किसी पत्र में उसे प्यार लिखा रहता है. उसकी पढ़ाई के विषय में पूछताछ रहती है.

उसे दुःख होता है कि उसका कोई मित्र नगर से बाहर नहीं. जितने हैं सब इसी नगर के हैं और इसी नगर में रहते हैं. किसी के बाहर जाने की संभावना भी नहीं. कभी-कभी गर्मियों, दशहरे-दीवाली की छुट्टियों में कोई अपने चाचा या मामा के यहां जाता है, तो वहीं खो जाता है. सैर-सपाटे में, नए वातावरण में इतना रम जाता है कि उसे भूल जाता है, अपने नगर को भूल जाता है. ऐसे में पत्र लिखने का प्रश्न ही कहां उठता है?

किंतु आज की डाक एक नूतन प्रभात लेकर आई थी, एक आकांक्षा की पूर्ति लेकर आई थी. अशोक को विश्वास नहीं हो रहा था. वह पोस्ट कार्ड पर लिखा अपना नाम बार-बार पढ़ रहा था. अपने शुभचिंतक की लिखाई को पहचानने का प्रयास कर रहा था. किसकी हो सकती है यह लिखावट? किसने उसे पत्र लिखा है? किसने उसके मन की व्यथा को पहचाना है? मामा के लड़के संजय ने? वह क्या पत्र लिखेगा! उसे तो पिक्चर और क्रिकेट से ही अवकाश नहीं. खाने का समय बड़ी कठिनाई से निकाल पाता है. चाचा के लड़के संजीव ने पत्र लिखा है शायद. लेकिन वह पत्र लिखेगा! अशोक अपने इस विचार पर स्वयं हंस पड़ता है. एक पंक्ति लिखकर चार स्थान से काटता है, उसे चार बार लिखता है, फिर उसे मम्मी को दिखाता है. स्कूल से छुट्टी का प्रार्थना-पत्र लिखने के लिए बड़े भैया की खुशामद करता है. फिर किसका हो सकता है वह पत्र? कौन उस पर अनायास इतना कृपालु हो गया है? उसने भेजने वाले का नाम देखा. पत्र के अंत में किसी का नाम नहीं था. उसे आश्चर्य हुआ. पत्र के किसी कोने में भेजने वाले का नाम नहीं था. पोस्ट कार्ड के ऊपर नगर का नाम नहीं था. उसका आश्चर्य बढ़ गया.

यह कैसा पत्र है? उसने सोचा. अवश्य किसी अनाड़ी

का है. उसने इससे पूर्व कोई पत्र नहीं लिखा लगता. लिखा होता, तो इतनी सामान्य एवं आवश्यक बातें भूल जाता? अशोक अब पत्र पढ़ने को बेहद उत्सुक हो उठा था. पोस्ट कार्ड को सीधा करके वह ध्यान से पढ़ने लगा.

'सुफला माता, सुफला माता, सुफला माता, सुफला माता, सुफला माता, सुफला माता, सुफला माता.

'सुफला माता के स्मरण में ही जीवन की गति है, व्यक्ति का उद्धार है. अपने भक्तों का सुफला माता विशेष ध्यान रखती है.

'सुफला माता के नाम के पचास पोस्ट कार्ड भेजने वाले लड़के को बिहार स्टेट लाटरी का पचास हजार

रुपये का पुरस्कार मिला. सुफला माता के नाम के बीस पोस्ट कार्ड भेजने वाले लड़के को उत्तर प्रदेश स्टेट लाटरी का बीस हजार रुपये का पुरस्कार मिला.

'सुफला माता यदि दया की मूर्ति है, तो क्रोध का भयानक रूप भी है. पोस्ट कार्डों की इस शृंखला को रोकने वाले एक लड़के के पिता की मृत्यु एक सप्ताह के भीतर

हो गई. दूसरे लड़के के पिता की दूकान अग्नि से स्वाहा हो गई. तीसरे लड़के के पिता की नौकरी छूट गई. चौथा लड़का फेल हो गया. सुफला माता के नाम के स्मरण, प्रसार-प्रचार में ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र का हित है.

'सुफला माता के नाम के कम से कम बीस पोस्ट कार्ड विभिन्न व्यक्तियों को तुरंत भेजें.

'सुफला माता. सुफला माता. सुफला माता.'

पोस्ट कार्ड पढ़कर अशोक चकरा गया. पत्र पाने का उसका उत्साह धूमिल पड़ गया. श्रीगणेश ही अच्छा नहीं हुआ. आगे के पत्रों से क्या आशा की जाए? वह पत्र लिखना आरंभ करे, तो आरंभ में एक साथ बीस पोस्ट कार्ड लिखे. बीस पोस्ट कार्ड अर्थात् दो रुपये नकद. दो रुपये स्टेट लॉटरी में लगा दे, तो कुछ मिलने की क्षीण संभावना हो सकती है. परंतु पोस्ट कार्डों पर रुपये लगाने से क्या लाभ होगा? लाभ तो दूर, किसी की मित्रता, किसी की शुभकामना तक प्राप्त नहीं होगी. पाने वाला मन ही मन कोसेगा. लाभ के लिए तो प्रयत्न करना होता है, लाभ का मार्ग खोलना होता है. सब पोस्ट कार्डों पर सुफला माता, सुफला माता--बार-बार लिखना, एक पोस्ट कार्ड लिखने में पांच मिनिट लगें, तो बीस पोस्ट कार्डों में सौ मिनिट लगेंगे. वह कोई कार्बन पेपर या टाइप राइटर नहीं जो यह कार्य शीघ्रता से निबटा ले!

नहीं, उसके पास फालतू समय नहीं है, व्यर्थ पैसे नहीं हैं. बीस क्या वह एक भी पत्र नहीं लिखेगा. वह दो रुपये क्या दस पैसे भी खर्च नहीं करेगा.

किंतु दूसरे ही क्षण उसकी दृढ़ता डगमगाने लगी. उसकी आंखों में पोस्ट कार्ड पर लिखी पंक्तियां दस गुना आकार धारण करके तैरने लगीं: 'पोस्ट कार्डों की इस शृंखला को रोकने वाले एक लड़के के पिता की मृत्यु एक सप्ताह के भीतर हो गई. दूसरे लड़के के पिता की दूकान अग्नि से स्वाहा हो गई. तीसरे लड़के के पिता की

—सत्यस्वरूप दत्त—

नौकरी छूट गई. चौथा लड़का फेल हो गया. . . .सुफला माता क्रोध का भयानक रूप भी है.'

अशोक को अपने आसपास का संसार घूमता हुआ प्रतीत हो रहा था. उसे लगा जैसे रोते-रोते उसकी मम्मी की आंखें लाल हो गई हैं. अभी पिछले दिनों पड़ोस के वाजपेयी अंकल का हार्टफेल हो गया था. सदा हंसने वाली सुधा आंटी की आंखें रोते-रोते लाल हो गई थीं. दो महीने बीत गए, सुधा आंटी की आंखें अबतक सामान्य नहीं हुईं.

नहीं नहीं, उसकी मम्मी के साथ यह नहीं हो सकता. . . नहीं नहीं, वह 'राम नाम सत्य है' का स्वर सुनने को तत्पर नहीं. पिता के बाद क्या होगा उसकी शिक्षा का? उसकी छोटी बहन मोना के भविष्य का? . . .लेकिन वह सब क्या सोच रहा है? वह क्या सोचे? वह क्या करे? वह कुछ समझ नहीं पा रहा था.

रात को अशोक ठीक से सो भी नहीं सका. रात भर पोस्ट कार्ड की पंक्तियां उसके सपनों में तैरती रहीं. बुरे-बुरे सपनों से उसकी नींद टूटती रही. पहली बार उसने देखा कि वह सड़क पार करते समय बस के नीचे आ गया है. सड़क पर उसकी रक्त से लथपथ काया पड़ी है. लोग आ-जा रहे हैं. कोई उसकी सहायता नहीं कर पा रहा. एक अपरिचित व्यक्ति उसके निकट खड़ा हुआ कह रहा है—'इसकी कोई सहायता मत करो. इसे सुफला माता ने दंड दिया है. इसने सुफला माता का अपमान

किया है!'

दूसरी बार उसने देखा कि पिता जी की नौकरी छूट गई है. घर में सबका मुंह लटक गया है. हर तरफ मनहूस उदासी छा गई है. पिता जी खिन्न स्वर में मम्मी से कह रहे हैं—'मेरी नौकरी इस नालायक के कारण छूटी. सुफला माता का नाम लिखते इसके हाथ घिसते थे! इसकी नाक नीची होती थी! अकल का पूरा दुश्मन है. पत्र का उत्तर न देने से पूर्व मुझसे पूछा तक नहीं. कल से इसका स्कूल जाना बंद. मेरे साथ सड़क-सड़क घूमकर भीख मांगेगा. सुफला माता के अनादर का प्रायश्चित्त करेगा!'

इस स्वप्न के पश्चात् अशोक सो नहीं सका. वह चारपाई पर उठकर बैठ गया. वह जानता था कि अब उसे नींद नहीं आएगी. आएगी भी तो अब उसे फेल होने का स्वप्न दिखेगा. वह चुपचाप चारपाई पर बैठा सुबह की प्रतीक्षा करता रहा. रात कितनी लंबी होती है, इसका अनुभव उसे प्रथम बार हो रहा था.

सुबह को उसका सिर भारी था. उसकी आंखें जल रहीं थीं. उसका सारा शरीर टूट रहा था. किसी काम में उसका मन नहीं लग रहा था. पत्र का उत्तर देने के संबंध में उसने अभी तक कोई निश्चय नहीं किया था.

●

अशोक का वह दिन अच्छा नहीं बीता. वह बस स्टॉप पर पहुंचा, तो बस छूट गई. दूसरी बस एकदम भरी हुई आई. तीसरी बस मिली, तो वह रास्ते में ही फेल हो गई, उसका टायर पंक्चर हो गया. देर से स्कूल पहुंचने पर उसे डांट पड़ी. कक्षा में उसने एक भी प्रश्न का सही उत्तर नहीं दिया. उसका प्रिय पेन, जिसे पिता जी ने उसके जन्म-दिन पर भेंट में दिया था, कहीं छूट गया. बहुत याद करने पर भी वह याद नहीं कर सका कि उसका पेन कहां छूट गया!

घर लौटते समय उसका चित्त स्थिर नहीं था. अनेक प्रश्न, अनेक आशंकाएं उसके मस्तिष्क में घुमड़ रही थीं. क्या सुफला माता तुरंत पोस्ट कार्ड न डालने पर उसे चेतावनी दे रही हैं? क्या ये आगे आने वाली भयंकर घटनाओं के पूर्व संकेत हैं?

शाम को उसने पोस्ट कार्ड पहले मम्मी को दिखाया और उन्हें साथ लेकर पिता जी को दिखाया. पत्र पढ़ते पिता जी के मुंह पर उठते भावों को देखता रहा. उन पर पत्र की वह प्रतिक्रिया नहीं हुई, जो वह सोच रहा था. पत्र पढ़कर पिता जी हंस पड़े.

"खाली मस्तिष्क, खुराफात की जड़! लगता है लोगों के पास करने को कोई ठोस काम नहीं. उनके पास बहुत-सा समय फालतू है!" कुछ क्षण ठहरकर पिता जी ने कहा, "बच्चे अकल के कच्चे! यह पत्र किसी बच्चे ने लिखा है या फिर बच्चा-अकल के बड़े ने लिखा है!"

किंतु मम्मी पर पत्र की विपरीत प्रतिक्रिया हुई. वह पोस्ट कार्ड पढ़कर गंभीर स्वर में बोलीं—"किसी बात को तो गंभीरता से लिया करो. देवी-देवताओं का अपमान करना उचित नहीं. अपना अशोक क्यों पत्र-शृंखला तोड़ने का पाप अपने सिर ले. दो रुपये ही की तो बात है!"

"बात न दो रुपये की है और न किसी के अपमान की. सुफला माता का आदेश सिर माथे पर. किंतु उन्होंने अशोक को पत्र डालने को नहीं कहा और न ही पत्र डालने की एजेंसी किसी को दी. ऐसे दो रुपये खर्च करने से, बीस पोस्ट कार्ड लिखने से बीस हजार रुपये आने लगें, तो प्रत्येक बीस पोस्ट कार्ड लिखने लगेगा. अप्रत्याशित रूप से बीस हजार किसी बिरले को ही मिलते हैं. वह भाग्यशाली पोस्ट कार्ड लिखने वाला भी हो सकता है, और न लिखने वाला भी!"

"आपसे तो कुछ कहना व्यर्थ है. क्या अशोक के बीस पोस्ट कार्ड लिख देने से हम निर्धन हो जाएंगे? जहां इतने पोस्ट कार्ड लिखते हैं वहां बीस और सही!" मम्मी ने कहा.

"इस 'और' का कोई अंत नहीं. कल ऐसा ही एक पत्र और आ जाएगा, परसों एक और आ जाएगा. स्पष्ट है, बीस पोस्ट कार्ड लिखने से ही समस्या का अंत होने वाला नहीं. इससे हमारी समस्या बीस और व्यक्तियों की समस्या बन जाएगी! उनमें से प्रत्येक को बीस पोस्ट कार्ड लिखने होंगे. फिर उन पोस्ट कार्डों को पाने वालों

शीर्षक प्रतियोगिता नं. २१ का परिणाम

पुरस्कार विजयी शीर्षक :

'समाजवाद के इंतजार में'

प्रेषक :

घनश्याम, द्वारा श्री गोकुलदास डागा,
३८।१२१४ टंगोरनगर, विक्रोली, बंबई-८३.

में से प्रत्येक को बीस पोस्ट कार्ड लिखने होंगे. इन पोस्ट कार्डों की उपयोगिता क्या है? यही न कि बहुतों का धन व्यय होगा, समय व्यय होगा! और परेशानी होगी सो अलग. हम इस शृंखला को रोक लेंगे, तो कितने लोगों का धन बचेगा, समय बचेगा, मानसिक कष्ट बचेगा. फिर देवी या देवता कोई अभिनेता या नेता नहीं, जो अपने प्रचार के दीवाने हों?"

"अशोक फेल-वेल हो गया तो तुम समझना. . ."

"पढ़ेगा, तो फेल कैसे होगा? नहीं पढ़ेगा, तो पोस्ट कार्ड लिखने से—सुफला माता, सुफला माता—लिखने से पास कैसे होगा?" पिता जी निश्चय पर अडिग रहे. कुछ क्षण रुककर उन्होंने अशोक से कहा, "तुम विज्ञान के छात्र हो. अपनी दृष्टि को, अपनी विचारधारा को वैज्ञानिक बनाओ. इस पत्र को भूल जाओ और सामान्य रूप से अपना काम करो. इसी में तुम्हारी मानसिक शांति है, तुम्हारा हित है. विश्वास रखो, पोस्ट कार्ड में तुम्हारा या मेरा हित या अहित करने की क्षमता नहीं!"

मम्मी को यह बात पसंद नहीं आई. वह खिन्न भाव से दूसरे कमरे में चली गई.

अशोक को पिता जी की बातें तर्क संगत लगीं. एक पोस्ट कार्ड किसी का हित-अहित कैसे कर सकता है? कैसे किसी का भाग्य बदल सकता है? कैसे किसी के जीवन की धारा बदल सकता है?

एक पोस्ट कार्ड के कारण उसकी मानसिक शांति भंग हो गई थी. उसकी नींद उड़ गई थी. अशोक को इस पर आश्चर्य हो रहा था. शायद साधारण बात को असाधारण महत्व देने से बात का बतंगड़ बन गया था. अधिक महत्व पाने के कारण एक वहम भयंकर यथार्थ दिखने लगा था.

अशोक मन ही मन सोच रहा था कि वह वहम को अपने पर हावी नहीं होने देगा. वह पोस्ट कार्ड की चुनौती को, वहम की चुनौती को स्वीकार करेगा. वह डगमगाएगा नहीं. पोस्ट कार्ड में कोई दम नहीं.

अगले कुछ दिन अशोक व्याकुल रहा. किसी-किसी क्षण एक अज्ञात भय, एक अज्ञात आशंका का झोंका उसे स्पर्श करता निकल जाता था. पिता जी विलंब से आते तो उसे आशंका होती, बहन खेलकर समय से नहीं लौटती, तो वह चिंतित हो उठता.

किंतु कुछ हुआ नहीं. आशंका, आशंका ही रही, यथार्थ नहीं बनी.

●

निबंध प्रतियोगिता में भेजा गया उसका निबंध जिले भर में प्रथम रहा. उसे सौ रुपये का पुरस्कार मिला.

स्कूल की क्रिकेट के फर्स्ट इलेवन में उसका चयन हो गया. जिले भर के स्कूलों से मैच खेलने का अवसर उसे गुदगुदाने लगा!

वह फिर व्यस्त हो गया था, फिर सामान्य हो गया था. जो पोस्ट कार्ड उसे मिला था, वह उसे भूल गया था या उसके पास इस विषय पर सोचने का समय नहीं था. ●

सी-डी २, सेक्टर ३, पोस्ट ध्रुवा,
रांची.

प्रति मास नए पुरस्कार

बच्चो, इस अंक की कहानियां ध्यान से पढ़ो और हमें २० फरवरी १९७१ तक लिखो कि अपनी पसंद के विचार से कौन-कौनसी कहानियां तुम पहले, दूसरे और तीसरे आदि नंबरों पर रखोगे. तुम्हें इस प्रकार उन सभी कहानियों पर अपनी पसंद बतानी है जिनका उल्लेख अतापता में 'सरस' कहानियों के अंतर्गत आया है. जिन बच्चों की पसंद का क्रम बहुमत के क्रम से अधिकतम मेल खाता हुआ निकलेगा, उन्हें हम सुंदर-सुंदर पुस्तकें पुरस्कार में भेजेंगे.

बाल पाठकों द्वारा इस तरह इस अंक की जो कहानी सर्वश्रेष्ठ ठहरेगी, उसके लेखक को भी ५० रुपये का एक अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा. अपनी पसंद एकदम अलग कार्ड पर लिखो. पता यह लिखो : **संपादक, 'पराग', हमारी पसंद प्रतियोगिता नं. ४८, पो. आ. बाक्स नं. २१३, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई–१.**

प्रतियोगिता नं. ४५ का परिणाम

इस प्रतियोगिता में केवल एक बच्चे का हल बिलकुल सही आया, उसका नाम और पता नीचे दिया जा रहा है, उसे शीघ्र ही पुरस्कार भेजा जाएगा.

० विनेश सूद, सुपुत्र श्री ठाकुरदास सूद, एस. डी. ओ., बिजली विभाग, पावंटा साहिब, सिरमौर (हिमाचल प्रदेश).

नवंबर अंक की कहानियों का सर्वाधिक लोकप्रिय क्रम इस प्रकार है :

१–खुशियों की वापसी, २–मनुष्य का पिता बालक, ३–एक मौत दो जीवन, ४–सन्नाटा, ५–एक बीमारी का इलाज, ६–अपराध, ७–महापुरुषों का बचपन, ८–लड़ाई, ९–कड़वा स्वाद.

'खुशियों की वापसी' शीर्षक कहानी के लेखक श्री प्रदीपकुमार को ५० रुपये का अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा.

में से प्रत्येक को बीस पोस्ट कार्ड लिखने होंगे. इन पोस्ट कार्डों की उपयोगिता क्या है? यही न कि बहुतों का धन व्यय होगा, समय व्यय होगा! और परेशानी होगी सो अलग. हम इस शृंखला को रोक लेंगे, तो कितने लोगों का धन बचेगा, समय बचेगा, मानसिक कष्ट बचेगा. फिर देवी या देवता कोई अभिनेता या नेता नहीं, जो अपने प्रचार के दीवाने हों?"

"अशोक फेल-वेल हो गया तो तुम समझना. . ."

"पढ़ेगा, तो फेल कैसे होगा? नहीं पढ़ेगा, तो पोस्ट कार्ड लिखने से—सुफला माता, सुफला माता—लिखने से पास कैसे होगा?" पिता जी निश्चय पर अडिग रहे. कुछ क्षण रुककर उन्होंने अशोक से कहा, "तुम विज्ञान के छात्र हो. अपनी दृष्टि को, अपनी विचारधारा को वैज्ञानिक बनाओ. इस पत्र को भूल जाओ और सामान्य रूप से अपना काम करो. इसी में तुम्हारी मानसिक शांति है, तुम्हारा हित है. विश्वास रखो, पोस्ट कार्ड में तुम्हारा या मेरा हित या अहित करने की क्षमता नहीं!"

मम्मी को यह बात पसंद नहीं आई. वह खिन्न भाव से दूसरे कमरे में चली गई.

अशोक को पिता जी की बातें तर्क संगत लगीं. एक पोस्ट कार्ड किसी का हित-अहित कैसे कर सकता है? कैसे किसी का भाग्य बदल सकता है? कैसे किसी के जीवन की धारा बदल सकता है?

एक पोस्ट कार्ड के कारण उसकी मानसिक शांति भंग हो गई थी. उसकी नींद उड़ गई थी. अशोक को इस पर आश्चर्य हो रहा था. शायद साधारण बात को असाधारण महत्व देने से बात का बतंगड़ बन गया था. अधिक महत्व पाने के कारण एक वहम भयंकर यथार्थ दिखने लगा था.

अशोक मन ही मन सोच रहा था कि वह वहम को अपने पर हावी नहीं होने देगा. वह पोस्ट कार्ड की चुनौती को, वहम की चुनौती को स्वीकार करेगा. वह डगमगाएगा नहीं. पोस्ट कार्ड में कोई दम नहीं.

अगले कुछ दिन अशोक व्याकुल रहा. किसी-किसी क्षण एक अज्ञात भय, एक अज्ञात आशंका का झोंका उसे स्पर्श करता निकल जाता था. पिता जी विलंब से आते तो उसे आशंका होती, बहन खेलकर समय से नहीं लौटती, तो वह चिंतित हो उठता.

किंतु कुछ हुआ नहीं. आशंका, आशंका ही रही, यथार्थ नहीं बनी.

●

निबंध प्रतियोगिता में भेजा गया उसका निबंध जिले भर में प्रथम रहा. उसे सौ रुपये का पुरस्कार मिला.

स्कूल की क्रिकेट के फर्स्ट इलैवन में उसका चयन हो गया. जिले भर के स्कूलों से मैच खेलने का अवसर उसे गुदगुदाने लगा!

वह फिर व्यस्त हो गया था, फिर सामान्य हो गया था. जो पोस्ट कार्ड उसे मिला था, वह उसे भूल गया था या उसके पास इस विषय पर सोचने का समय नहीं था. ●

सी-डी २, सेक्टर ३, पोस्ट धुरवा,
रांची.

प्रति मास नए पुरस्कार

बच्चो, इस अंक की कहानियां ध्यान से पढ़ो और हमें २० फरवरी १९७१ तक लिखो कि अपनी पसंद के विचार से कौन-कौनसी कहानियां तुम पहले, दूसरे और तीसरे आदि नंबरों पर रखोगे. तुम्हें इस प्रकार उन सभी कहानियों पर अपनी पसंद बतानी है जिनका उल्लेख अतापता में 'सरस' कहानियों के अंतर्गत आया है. जिन बच्चों की पसंद का क्रम बहुमत के क्रम से अधिकतम मेल खाता हुआ निकलेगा, उन्हें हम सुंदर-सुंदर पुस्तकें पुरस्कार में भेजेंगे.

बाल पाठकों द्वारा इस तरह इस अंक की जो कहानी सर्वश्रेष्ठ ठहरेगी, उसके लेखक को भी ५० रुपये का एक अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा. अपनी पसंद एकदम अलग कार्ड पर लिखो. पता यह लिखो: **संपादक, 'पराग', हमारी पसंद प्रतियोगिता नं. ४८, पो. आ. बाक्स नं. २१२, टाइम्स आफ इंडिया, बंबई–१.**

प्रतियोगिता नं. ४५ का परिणाम

इस प्रतियोगिता में केवल एक बच्चे का हल बिलकुल सही आया, उसका नाम और पता नीचे दिया जा रहा है, उसे शीघ्र ही पुरस्कार भेजा जाएगा.

० दिनेश सूद, सुपुत्र श्री ठाकुरदास सूद, एस. डी. ओ., बिजली विभाग, पावंटा साहिब, सिरमौर (हिमाचल प्रदेश).

नवंबर अंक की कहानियों का सर्वाधिक लोकप्रिय क्रम इस प्रकार है:

१–खुशियों की वापसी, २–मनुष्य का पिता बालक, ३–एक मौत दो जीवन, ४–सन्नाटा, ५–एक बीमारी का इलाज, ६–अपराध, ७–महापुरुषों का बचपन, ८–लड़ाई, ९–कड़वा स्वाद.

'खुशियों की वापसी' शीर्षक कहानी के लेखक श्री प्रदीपकुमार को ५० रुपये का अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा.

मौसम

• छाया: जे.एस. पारीक

जैसे टीचर के आते ही
हवा बदलती क्लास रूम की,
हर शैतानी रुक जाती है;
इसी तरह नटखट जाड़े की
तूफानी शरारतें सारी बंद हो गईं!
आ पहुंचे टीचर वसंत जी
कक्षा-घर में,
साथ लिए खुशबू के झोंके,
आकर बोले, जैसे बजी पवन की वंशी,
"बच्चो, तुमने पढ़ीं पुस्तकें,
अब भी पढ़ना,
आगे बढ़ना;
किंतु एक पुस्तक बाहर भी
खुली हुई है!
जिसमें फूल, पत्तियों, कलियों के
रंगीन लिखे हैं अक्षर.

की पुस्तक

कविता: सीताराम गुप्त

जिसके हरियाले पृष्ठों पर
उड़ती तितली,
गाते भंवरे,
चिड़ियां प्यारे पंखों वाली
चित्र बनातीं सुंदर सुंदर!
किरण ओस पर गिरकर
इंद्रधनुष रचती है!
तेज हवा चलती, पत्तों में
कैसी उथल-पुथल मचती है!
इस मौसम की पुस्तक में ऐसा जादू है;
हर पढ़ने वाले को
नई आंख मिलती है!
मिट्टी की सौंधी खुशबू से
मन की कली कली खिलती है!
इसकी भाषा जीवन-भाषा,
यह कुदरत का मुफ्त तमाशा!"

फिसलने से पहले (पृष्ठ ११ से आगे)

बोला, "तू चाहे तो तेरे पास भी इतना ही पैसा हो सकता है!"

"मेरे पास? वह कैसे?" दीपक के स्वर में आश्चर्य मिश्रित उत्सुकता थी.

"जैसे-जैसे हम कहें, वैसे-वैसे तू करता जा. फिर तेरे पास भी नोटों के ढेर लग जाएंगे. तेरे पास एक से एक बढ़िया कपड़े होंगे, ऐसे कि तेरे साथी आह भर कर रह जाएं. खूब बढ़िया मकान होगा. तेरे को किसी चीज की कमी नहीं होगी. फिर तेरी बहन को भी स्कूल में मगजपच्ची नहीं करनी पड़ेगी. समझे ?...."

दीपक ने प्रश्नसूचक दृष्टि से सुकांत की तरफ देखा.

"अगर तू यह सब चाहता है, तो साढ़े तीन बजे हमें काठ की पुलिया पर मिल!"

"आज साढ़े तीन बजे? लेकिन..."

"हम कुछ नहीं जानते. हमारे बॉस से मिलने का यही वक्त है."

"बॉस? कैसा बॉस?"

"यह तो जब वहां पहुंचोगे, तो पता चल जाएगा. घबराने की कोई बात नहीं है. बॉस कोई हौव्वा नहीं है!"

सुकांत के दिखाए सब्जबागों ने दीपक के मन में हलचल मचा दी. उसके मन में एक विचार आता था, एक जाता था. एक मन कहता था—'सुकांत के विचार बिलकुल ठीक हैं. कल न मालूम क्या होगा? इसलिए आज को जी भर के जिओ. मस्ती करो. जिन्दगी का दूसरा नाम मस्ती है. कल को सुधारने के लिए आज को मर-खपकर व्यर्थ गवांने से क्या फायदा!' तभी दूसरी तरफ से आवाज आती—'नहीं ऽ...! सुकांत के विचार तुम्हें गुमराह कर रहे हैं. वर्तमान से संघर्ष कर अपने लिए उज्जवल और सुनहरे भविष्य का निर्माण करो. जो यह कहते हैं—कल किसने देखा है? वे निराशावादी होते हैं. अगर तुमने आज को जी लिया और कल के लिए कुछ नहीं किया, तो तुम्हारा कल जैसा आएगा, उसका तुम स्वयं ही अनुमान लगा सकते हो. इसलिए बेहतर यही है कि...' एक के बाद एक विचार उसके मन में आ रहे थे!

"दीपक डियर, किस सोच में पड़ गए?"

दीपक हड़बड़ा गया. उसकी विचारधारा टूट गई. सुकांत और जयंत उठ खड़े हुए जाने के लिए.

"अच्छा, दीपक. हम अब चलते हैं." "मैं साढ़े तीन बजे तुम्हें काठ की पुलिया पर मिलूंगा."

"मिल जाना. कहीं ऐसा न हो कि..."

"नहीं-नहीं, मैं जरूर मिलूंगा."

वे दोनों चले गए.

●

गिरजाघर की घड़ी ने तीन बजाए, तो वह चौंक पड़ा. उसने करवट ली. इधर-उधर देखा. ठीक साढ़े तीन बजे उसका काठ की पुलिया पर मौजूद होना बहुत जरूरी है. तीन तो यह सब सोचते-सोचते ही बज गए. आहिस्ता से वह उठ बैठा. उसने बगलवाली चारपाई पर नजर डाली. दीदी और कुक्की दोनों सो रही थीं. वह धीरे से चारपाई से नीचे उतर आया. डरते-डरते कदम आगे बढ़ाए. अचानक उसका पैर जमीन पर रखे कप-प्लेट से टकरा गया. आवाज हुई और कप फर्श पर लुढ़कने लग गया. वह हड़बड़ा गया. अगर दीदी जग गई, तो? लेकिन दीदी जगी नहीं. वह पंजों के बल बाहर आ गया. बिना कोई आहट किए. बाहर वाले दरवाजे को खोलने के लिए जो उसने हाथ बढ़ाया, तो लगा जैसे बिच्छू ने काट खाया हो. भीतर से ताला लगा हुआ था. दीपक सिर पीटकर रह गया. दीदी ने आज तक अंदर से ताला नहीं लगाया. लेकिन आज क्यों भला? ओह! जब उसकी किस्मत को ही ताले पड़े हुए हैं, तो कोई क्या करे? अपनी किस्मत को कोसता हुआ दीपक अंदर आकर टूटी डाल की तरह धड़ाम से अपनी चारपाई पर आ पड़ा. वह रुंआसा हो गया. सोचने लगा, अब क्या किया जाए!

सहसा उसके मस्तिष्क में एक विचार कौंधा. क्यों न वह दीदी के सिरहाने के नीचे से चाबी निकाल ले. उसने लेटे-लेटे ही दीदी के सिरहाने की तरफ हाथ बढ़ाया. सिरहाने के नीचे हाथ डालकर वह चाबी निकालना ही चाहता था कि दीदी ने उलटी तरफ करवट बदल ली. उसने फुर्ती से हाथ पीछे खींच लिया. चाबी दीदी के सिर के नीचे दब गई. उफ! दीदी को भी ऐन इसी वक्त करवट लेनी थी. कोई क्या करे! उसकी किस्मत ही खराब है! जब तक दीदी दूसरी तरफ करवट बदलेंगी, तब तक तो सारा खेल ही समाप्त हो जाएगा...

इतनी सारी संघर्ष की रात काटने के बाद न जाने कब नींद ने उसे अपनी गोद में ले लिया.

●

"दीपक, उठ!" यह कुक्की थी जो सुबह-सुबह दीपक की चारपाई पर चढ़कर उसका कान पकड़कर उसे उठा रही थी.

"पचास बार समझाया है, दीपक नहीं, भैया कहते हैं. तुझसे बड़ा है..." चाय बना रही दीदी की आवाज आई.

दीपक ने पहले तो कुक्की को एक थप्पड़ दिया, और उसे जमीन पर उतार दिया. फिर करवट बदलकर बड़बड़ाया—"क्या आफत है, सुबह-सुबह. सोने भी नहीं देते!"

दीदी हैरान कि आज इसे क्या हो गया है! पहले तो ऐसा कभी नहीं हुआ. वह उठीं और दीपक की चारपाई के पास आकर स्नेह से बोलीं, "दीपक, क्या बात है?

उठ क्यों नहीं रहा? तबीयत तो ठीक है? साढ़े पांच बज गए हैं! सात बजे तेरा अंग्रेजी का पेपर है न!..."

दीपक चीख मारकर उठ बैठा. "दीदी ऽऽ..."

"अरे, अरे, तू चीखा क्यों? सपने में भूत-वूत देखे तो..."

"नहीं, दीदी, नहीं..."

"फिर?"

"कुछ नहीं. अच्छा, प्लीज, मुझे चाय दे दो. थोड़ा-सा पढ़ूंगा फिर तैयार होकर पेपर देने जाना है."

●

दीदी उसके लिए चाय लेने चली गईं. दीपक का दिल जोरों से धड़कने लगा. यह उसे क्या हो गया है? पेपर की बात वह कैसे भूल गया? सुकांत के कुविचारों की दलदल में वह ऐसा फंसा कि यह भूल ही गया कि कल उसका अंग्रेजी का पेपर है. अगर वह साढ़े तीन बजे काठ की पुलिया पर उन्हें मिल जाता, तो शायद आज का यह पेपर न दे पाता. उसका एक साल खराब हो जाता. वे लोग इसे न जाने कहां-कहां ले जाते. क्या मालूम किस बॉस के चंगुल में वह फंस जाता. सुकांत वगैरह न जाने इस बॉस के 'अंडर' क्या काम करते हैं. चोरी-छिपे जो करते हैं जरूर ऐसा-वैसा काम ही करते होंगे. अगर वह भी फंस जाता तो...! उसे झुरझुरी छूट गई. रात तक वह उनके विचारों से सहमत था. उसने बाहर जाने की कोशिशें भी कीं, पर असफल रहा. उस वक्त उसने अपनी किस्मत को कोसा. पर अब... उस पर से बात का सारा नशा उतर चुका था. वह सोचने लगा, रात को आदमी का दिमाग क्यों खराब हो जाता है—जैसे उसका हुआ था! उस वक्त अच्छे-बुरे का निर्णय करने की बुद्धि कहां चली गई थी?

इतनी देर में दीदी चाय ले आईं. चाय लेते वक्त उसने दीदी का चेहरा देखा था. वही रोज वाला उत्साह से पूर्ण तेजयुक्त चेहरा. वह सोचने लगा, दीदी उसके लिए इतना क्यों करती हैं? अगर वह भी उसी की तरह स्वार्थी हो जाएं, तो कैसे चले? अचानक एक वाक्य उसके दिमाग से टकराया—वर्तमान को सुखी बनाओ! उसने सिर को झटका दिया. हुंह! वर्तमान को सुखी बनाओ... अचानक दीपक ने महसूस किया कि इतनी देर से उसके साथ चिपटे दोनों भूत कहीं गायब हो गए हैं. दीपक ने अपने आपको बेहद हल्का महसूस किया. दीदी! मैं काई पर चला, लेकिन बिना फिसले बाहर आ गया. केवल आपके ठोस विचारों के सहारे...! उसका मन दीदी के प्रति श्रद्धा से भर गया.

●

दीपक परीक्षा देकर घर आया, तो दीदी को घर पर देखकर चौंक गया.

दीदी से उसने पूछा, "अरे, आज आप स्कूल नहीं गईं?"

"नहीं. और अब कभी नहीं जाऊंगी."

"क्यों?" दीपक बुरी तरह घबरा गया.

"अरे, तू घबरा क्यों गया? मेरी गवर्नमेंट स्कूल में सर्विस लग गई है. अभी-अभी यानी स्कूल जाने से पहले ही डाकिया 'एपाइंटमेंट लैटर' दे गया है. अभी जाकर पहले स्कूल की प्रिंसिपल को चार्ज दे आती हूं. वहां तो कल ज्वाइन करना है."

"वाह, दीदी, यह तो बहुत बढ़िया खबर सुनाई आपने. आज सुबह उठकर मैंने भला किसकी शक्ल देखी थी. हां, आप ही की तो!"

"हिश...!"

"अब कुछ मैं भी सुनाऊं?"

"हां-हां, जरूर..."

"काठ की पुलिया के पास एक अंडरग्राउंड स्मगलिंग का अड्डा पकड़ा गया है. आज सुबह चार बजे पुलिस ने अड्डे को तलाश करके उस पर छापा मारा और सब स्मगलरों को अरेस्ट कर लिया. स्मगलिंग का सारा माल बरामद कर लिया—घड़ियां, टेप-रिकार्डर, सोना, अफीम वगैरा. एक मिनिस्टर का भी इस धंधे में बहुत हाथ है. सुना है उस पर मुकदमा चलेगा."

"अच्छा हुआ, भंडा कभी न कभी तो फूटता ही."

"दीदी, इन स्मगलरों में मेरी क्लास के दो विद्यार्थी सुकांत और जयंत भी थे!"

"अच्छा?... वही तो नहीं जिनका तू कभी-कभी जिक्र किया करता था? वही मंत्री के भतीजे तो नहीं ...वो गुंडे-लफंगे...?"

"हां-हां, वही..."

"फिर?"

"फिर..." दीपक आगे कुछ न बोल सका. गला रुंध गया. आंखें भर आईं और देखते-देखते वह रोने लगा.

"अरे, इन लफंगे-बदमाशों के लिए रोता है? तेरी क्लास के हैं तो क्या हुआ? तूने कारनामे तो इनके देख ही लिये."

"मैं इसलिये नहीं रो रहा कि ये मेरी क्लास के हैं."

"तो फिर?"

"दीदी..." दीपक वहां से हट गया और कमरे में पड़ी चारपाई पर औंधा लेटकर फूट पड़ा. उसकी रुलाई रुक ही नहीं रही थी.

दीदी रसोई में से निकलकर उसके पास आ गईं. उसे चुप कराते हुए बोलीं, "अरे, कुछ बता तो! ऐसे काहे को रो रहा है?"

दीपक की रुलाई और तेज हो गई. वह क्या बताए उसे क्या हो गया है...

उसने तकिए में दांत गड़ा लिये. ●

२६०, आदर्श नगर; जयपुर–४ (राज.)

kissekahani.com

कहानी

समदर्शी

समदर्शी उसे कहते हैं जो सबको समान रूप से देखे. अपने आपमें यह बहुत बड़ा गुण है और जिसके पास यह गुण है, उसके लिए यह वरदान है. लेकिन यही वरदान अभिशाप बन जाता है, जब इस शब्द को मजाक की तराजू पर चढ़ाया जाता है. तब इसके अर्थ कुछ और ही होते हैं. बेचारे बंशी के साथ भी कुछ ऐसा ही था. यूं तो वह भला-चंगा व हृष्ट-पुष्ट लड़का था. लेकिन दैवयोग से उसकी एक आंख जाती रही थी. समदर्शी का नाम उसे इसी कारण दिया गया था.

जब बंशी ने शुरू-शुरू में होश संभाला ही था तब उसे अपनी कानी आंख होने का बहुत दुःख था. तब वह सोचा करता था कि संसार में वही एक बदनसीब है. भगवान ने क्या सोचकर उसके साथ यह अन्याय किया है? उसके मां-बाप के किस पाप का फल उसे मिला है?

एक अरसे तक वह यही सब सोच-सोचकर दुखी होता रहा. लेकिन धीरे-धीरे जब उसकी समझ में अनुभव भी शामिल होने लगा, तो उसके मन की पीड़ा शांत पड़ने लगी. वह सोचता कि इस संसार में और भी बहुत-से लोग हैं, जिनके अंगों में कोई न कोई खराबी है. कोई लंगड़ा है कोई लूला, कोई बहरा है कोई गूंगा, कोई ठिगना है तो कोई लंबा. पागलों, नासमझों की भी कोई कमी नहीं. फिर उसे ही चिंता क्यों करनी चाहिए? उनके मुकाबले में तो वह 'अच्छा' ही है.

यह जानकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि दुःख का घेराव जो उसने अपने चारों तरफ डाल रखा था, उसका जिम्मेवार सिर्फ वही था, क्योंकि आज तक किसी ने न तो मोहल्ले में और न स्कूल में ही उसे चिढ़ाया और न उस पर व्यंग्य कसा और न कोई उस पर कभी हंसा था. बंशी के दोस्तों में से भी किसी ने उसकी आंख की कभी चर्चा नहीं की थी. उनके व्यवहार से ऐसा लगता

था जैसे उसकी दोनों आंखें सब की तरह सलामत हैं और वह सब के जैसा ही है.

लेकिन जब से सतीश ने बंशी की कक्षा में प्रवेश लिया था, उसको एक बार फिर अनुभव हुआ कि उसके साथ अन्याय हुआ है. यह अन्याय नहीं तो और क्या है जो सतीश उसका मजाक उड़ाता है, जैसे वह इसी के लिए पैदा हुआ हो.

सतीश यूं तो बड़ा अच्छा लड़का था, सुंदर, स्वस्थ और खुशमिजाज. लेकिन सबसे बड़ा ऐब उसमें यही था कि दूसरों में जब कोई कमी देखता या किसी की गलती पकड़ता, तो फिर उसके पीछे ही पड़ जाता था— वह अपने आपको 'पूर्ण' समझता था, शायद इसी लिए.

शुरू-शुरू में जब वह नया नया ही आया था, बंशी को देखकर मुस्करा उठता था. 'कैसा कार्टून है यह?' वह सोचता. धीरे-धीरे जब वह सबमें घुलमिल गया, तो बंशी की आंख उसके मजाक का विषय बन गई.

कोई बंशी का नाम लेता, तो वह ऊंची आवाज से कहता ताकि बंशी भी सुन ले—"अरे कौन? वो काना बंशी. . .समदर्शी!"

उसके बार-बार 'काना बंशी समदर्शी' कहने का ही परिणाम था, जो दूसरों ने भी बंशी को समदर्शी कहना शुरू कर दिया. और अब तो बंशी का नाम ही जैसे लड़के भूल गए थे. सब उसे 'समदर्शी' कहते.

बंशी के लिए समदर्शी का संबोधन अच्छे शब्द में लिपटी हुई एक गाली के समान था जैसे कुनैन की कड़वी गोली अच्छे रैपर में छुपी होती है!

सतीश उसे तरह तरह से चिढ़ाने की कोशिश करता

—हसनजमाल छीपा—

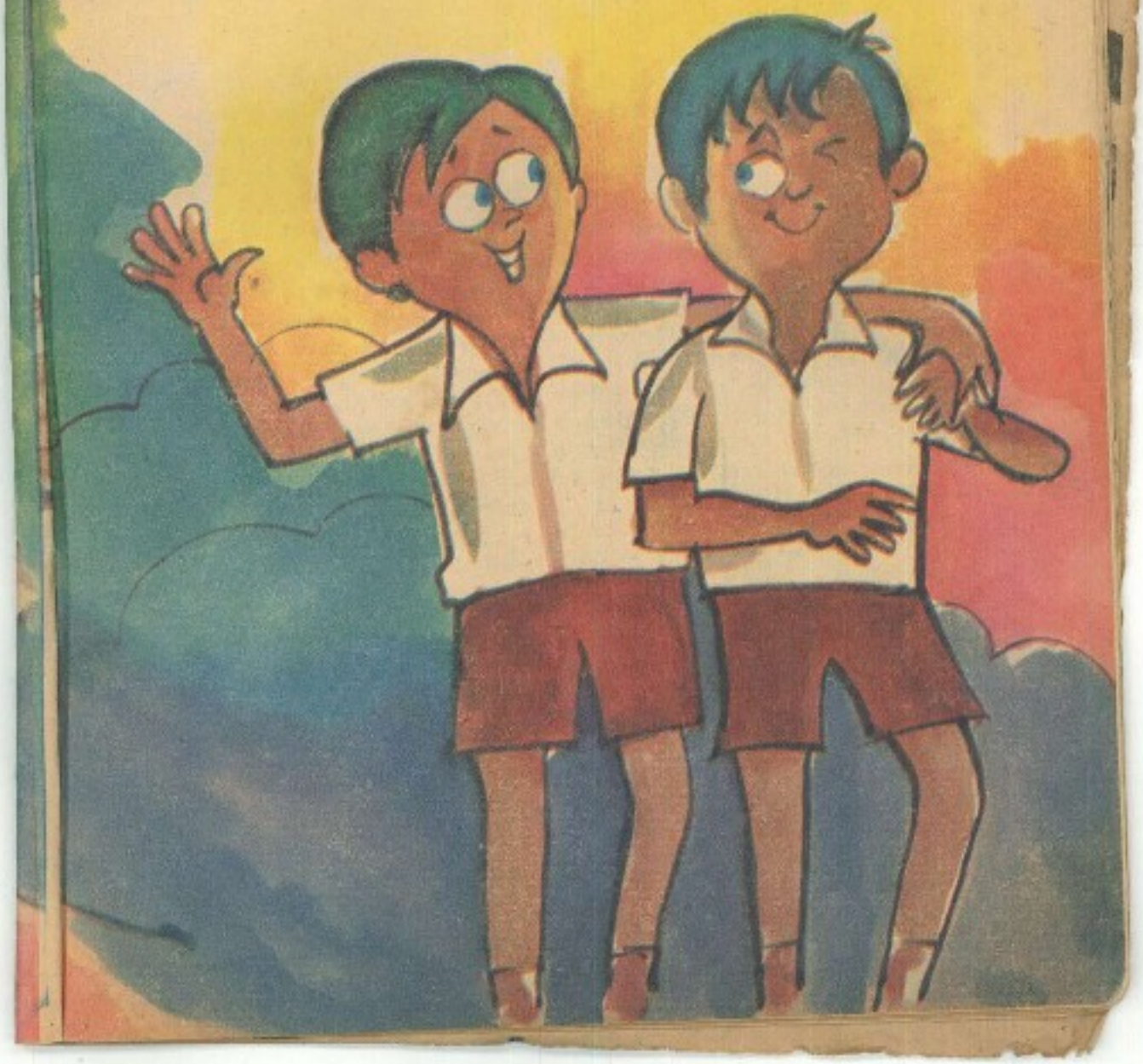

रहता था. कभी वह उसके दाएं बाजू जा खड़ा होता था. उधर की बंशी की आंख कानी थी. सतीश कहता—"समदर्शी, नजर तो आ रहा हूं न मैं. पहचाना मुझे?"

उससे पहले कि वह सिर घुमाकर उसे देखने का प्रयत्न करता, सतीश खुद उसके सामने आ खड़ा होता—"सिर घुमाने की तकलीफ क्यों करते हो? लो तुम्हारा दोस्त सतीश सामने आ गया."

"कोई बात नहीं," कहकर बंशी चुप रह जाता. लेकिन लड़के जो सतीश के साथ होते, हंसे बिना नहीं रहते और बंशी क्रोध व पश्चात्ताप के मिले-जुले भावों में खो-सा जाता.

खेल के मैदान में जब पार्टनर चुनने का प्रश्न आता, तो बंशी को चिढ़ाने की नीयत से सतीश बोल उठता—"मैं तो बंशी को पार्टनर नहीं रखूंगा. इसको पार्टनर बनाया, तो समझो मैं खेलने से पहले ही हारा!"

लड़कों की आंखें स्वतः बंशी की तरफ उठ जातीं—"मुझे तेरे साथ खेलना ही नहीं है!" कहता हुआ बंशी दूर जा खड़ा होता, जैसे वह अछूत हो.

मामला एक दिन का होता, तो सब्र कर लिया जाता, लेकिन सतीश व उसके साथियों ने उसे तंग करने के लिए जैसे कमर कस रखी थी. सभी उसे छेड़ते.

अब शंभू ही की लो. वह क्लास में उसके एक बाजू बैठता था. उस दिन मास्टर साहब होमवर्क नोट करवा रहे थे कि बंशी ने पैंसिल लेने के लिए सामने हाथ बढ़ाया. लेकिन कुछ गीला-गीला लगने पर वह चौंक-सा गया. उसकी उंगलियां स्याही से भर गई थीं और पैंसिल गायब थी. लेकिन वह चोरी भी नहीं गई थी. बंशी के सामने से हटाकर कानी आंख की तरफ कर दी गई थी—इतनी दूर कि बंशी पहली नजर में न देख सके.

बंशी ने दाएं-बाएं देखा और पैंसिल उठा ली. पैंसिल उठाते समय उसकी निगाह शंभू पर पड़ी, जो भेदभरी मुस्कान से उसी की तरफ देख रहा था. बैंचों के गलियारे से हटकर बराबर वाली बेंच पर सतीश बैठता था. वह भी मुस्करा रहा था.

●

एक दिन तंग आकर उसने क्लास अध्यापक से शिकायत कर दी. मास्टर जी ने दो-चार नसीहतों के लेक्चर झाड़ दिए, साथ में चेतावनी भी दे दी कि आगे से ऐसी शिकायत आई तो कठोर दंड दिया जाएगा. बंशी ने सोचा, अब इन मुसीबतों के पिल्लों से पीछा छूट जाएगा. लेकिन वह उसकी खामखयाली निकली. शिकायत का मतलब उन्होंने यह लिया कि 'समदर्शी' अब बाकायदा मुकाबले में उतर आया है. जबकि बेचारे बंशी का ऐसा कोई विचार नहीं था. सतीश, शंभू व उन जैसे उनके अन्य साथी बंशी को और अधिक खुल्लमखुल्ला चिढ़ाने लगे. और वह सुनकर सिर नीचा कर लेता.

उस दिन वह बड़ा उदास था. जिसकी मां बीमार होती है उसका दुःख वही जानता है. आज उसका मन पढ़ाई में नहीं लग रहा था. बार-बार उसकी नजरों के सामने मां का पीला मुरझाया हुआ चेहरा घूम जाता था. तभी सतीश ने उसकी दुखती रग को छेड़कर कहा—"लगता है आज समदर्शी का कोई मर गया है. देखो, कैसी मातमी शक्ल बनाए बैठा है!"

घर आकर खूब ही तो रोया वह मां के आंचल में मुंह छुपाकर. पूरी बात सुनकर मां ने समझाया—"मेरे लाल, इतनी छोटी-छोटी बातों पर जी छोटा नहीं किया करते. ईश्वर की यही इच्छा थी, जो तेरी एक आंख छीन ली. तू यही समझ कि लड़के तेरा नहीं, ईश्वर का मजाक उड़ाते हैं. ईश्वर ने ही बनाया है तुझे, वही तेरे लिए कुछ करेगा."

पता नहीं बंशी की मां ने किस मंशा से यह बात कही थी कि दो ही रोज बाद क्रिकेट खेलते हुए सतीश की एक आंख पर गेंद की करारी चोट लगी. चोट संगीन थी. उसे अस्पताल ले जाया गया और फिर कई दिनों तक सतीश स्कूल नहीं आया.

"न जाने कैसे सतीश खेल में इतना गाफिल रहा?"

"अरे भई, सतीश की बात ही छोड़ो. वह मैदान में इस तरह खड़ा रहता है, जैसे मस्ती मार रहा हो!"

"भगवान न करे, उसकी आंख को कुछ हो जाए! मुझे तो 'समदर्शी' की बेईमानी नजर आती है. पता नहीं साले ने किस कानी आंख से देखा कि. . ."

"कुछ भी हो, भई, कहते हैं कि अच्छे तैराक ही पानी में डूबते हैं; सो सतीश के साथ भी ऐसा ही हुआ."

सतीश के दोस्त इस तरह की बातें करते थे, तो बंशी सोचता कि इस दुर्घटना में उसका क्या कुसूर? शायद उसकी मां ने ही उस दिन शाप दिया था. लेकिन नहीं, एक मां भला ऐसा क्यों करने लगी? उसे तो जब बंशी ने बताया कि सतीश के साथ ऐसा हुआ है, तो वह इसी तरह बेचैन हो उठी थी जैसे कभी उसके चोट लगने पर हुआ करती है. बल्कि उसने बंशी को हिदायत की कि वह सतीश से मिलने उसके घर जाए. वह ही नहीं गया था यह जानकर कि कहीं सतीश इसका दूसरा अर्थ न निकाल ले. फिर मां के बार-बार पूछने पर कि गया या नहीं, एक दिन उसे सतीश के यहां जाना पड़ा.

●

सतीश घायल आंख पर पट्टी बांधे निर्जीव-सा चारपाई पर पड़ा था. बंशी सिरहाने जाकर बैठा, तो भी वह गुमसुम रहा.

"अब कैसी है आंख? डाक्टर साहब ने क्या बताया?" शिष्टाचार के नाते बंशी ने पूछा. लेकिन सतीश उसे जलती नजरों से घूरकर रह गया. बंशी इस उम्मीद में बैठा रहा कि शायद कुछ जवाब मिले, लेकिन सतीश ने थोड़ी देर बाद पास बैठी अपनी मम्मी से कहा—"मम्मी इसे कहो कि यहां से चला जाए. मुझे

अच्छा नहीं लगता."

सतीश की मम्मी के कुछ कहने से पहले ही बंशी उठ खड़ा हुआ और नमस्ते करता हुआ सतीश के घर से निकल गया. उसका छोटा-सा मन बेचैन था. क्या सहानुभूति प्रकट करना भी पाप है? क्या घर आए मेहमान के साथ ऐसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए?

●

सतीश अधिक दिनों तक स्कूल से गैरहाजिर न रह सका. भला उस जैसे उद्दंड बालक को घर में चैन कहां? आंख में थोड़ी राहत मिलते ही स्कूल चला आया. उसकी घायल आंख पर अब भी पट्टी बंधी थी.

क्लास रूम के बाहर बरामदे में खड़ा वह आपबीती सुना रहा था कि बंशी चुपके से उसके पास जाकर खड़ा हो गया—उधर, जिधर आंख पर पट्टी बंधी थी. फिर आहिस्ते से कान के पास मुंह ले जाकर बोला—"क्यों, भाई, नजर तो आ रहा हूं न? मैं हूं तुम्हारा दोस्त बंशी! तुम्हारे शब्दों में 'समदर्शी'! भगवान न करे, कल तुम्हारी आंख को कुछ हो जाए, तो तुम भी समदर्शी कहलाओगे मेरी तरह. फिर मैं भी समदर्शी और तुम भी समदर्शी —खूब गुजरेगी जब मिल बैठेंगे दीवाने दो."

सतीश के काटो तो खून नहीं, उसके तन-बदन में आग-सी लग गई. लेकिन यह पहला मौका था कि वह बजाए उलझने के पीछा छुड़ाते हुए बोला— "समदर्शी जो है वही रहेगा. दो-चार रोज में पट्टी खुल जाएगी, फिर देखना कि समदर्शी कौन है!"

बंशी मुस्करा उठा. उसकी मुस्कराहट अर्थहीन नहीं थी. मन की भड़ास निकालने का इससे अच्छा मौका और कब मिलता?

"यार, 'समदर्शी' ने कमाल ही कर दिया, और तुम भी चुप ही रहे," सतीश के दोस्तों ने कहा.

"कमजोर समय में अक्लमंद लोग चुप ही रहते हैं!" सतीश दूर किसी गहरी सोच में से निकलते हुए बोला. लेकिन बंशी की बात उसके दिल को लग चुकी थी. काश, वह खेलते समय सजग रहता, तो यह नौबत न आती. घुटना ही फूट जाता, पर गैंद आंख पर तो न लगती. वह आंख पर ही लगी और समदर्शी को मौका मिला. मैंने उस दिन अच्छा ही किया, जो मम्मी से कहकर उसे चलता किया. मुझे जलाने ही आया होगा उस दिन सहानुभूति जताने की नीयत से. कुछ भी हो, कल इस पट्टी से छुट्टी. यह पट्टी ही थी जो 'समदर्शी' ने उसकी आड़ लेकर मुझे चिढ़ाया. आंख तो ठीक हो चली थी. डाक्टर के कहने से पट्टी की कैद और बढ़ा दी गई थी, लेकिन इस कैद से अब छुटकारा पा लूंगा.

दूसरे रोज वह स्कूल आया, तो उसकी आंख पर पट्टी न थी. आंख बुरी तरह लाल थी. पपोटे सूजे हुए थे. बार-बार आंख खटकती थी. एक असहनीय दर्द होता था. मम्मी ने समझाया भी था, लेकिन वह न माना था

(शेष पृष्ठ ५५ पर)

लघु कथा—

फोड़ा और बुखार

जब न इतने डाक्टर थे और न इतनी दवाएं ही थीं, तब का यह किस्सा है. पंडित जी को हुआ जांघ पर फोड़ा और अहीर को आया बुखार.

पंडित जी को हर समय अपने फोड़े का ही ध्यान रहता. उन्हें जो भी कुछ दवा बताता, उस दवा को वह फोड़े पर लगाते. और फोड़ा था कि बढ़ता ही गया!

उधर अहीर का बुखार भी बढ़ता ही रहा; क्योंकि वह अपने बुखार की रत्ती भर परवाह न करता. सदा की तरह दूध दुहता, दूध पीता और सारा दिन काम करता.

एक रोज फोड़े और बुखार की मुलाकात हो गई. दोनों के बीच इस प्रकार बातें हुईं—

फोड़ा बोला, "यार बुखार, कैसे हो? कहां हो?"

"भाई, नमस्कार! बहुत मजे में हूं. बड़ा सुख मिल रहा है. घी-दूध पाकर दिन पर दिन तगड़ा होता जा रहा हूं. अपनी कहो," बुखार ने कहा.

फोड़ा बोला, "मेरे दिन भी बहुत अच्छे बीत रहे हैं. एक पंडित जी की जांघ पर हूं. रात-दिन वह मेरे ही बारे में सोचते रहते हैं. जी ही नहीं होता कि छोड़ूं."

"एक बात कहूं? मानोगे?" बुखार ने पूछा.

"बोलो, अवश्य मानूंगा!"

"आओ, हम अपनी अपनी जगहें बदल लें. मैं जरा पंडित जी का मजा लूं और तुम कुछ दिन घी-दूध का!"

फोड़ा बोला—"बात तय रही!"

अगले दिन पंडित जी को आया बुखार और अहीर की जांघ पर उठा फोड़ा. अहीर ने फोड़े को फौरन रगड़ दिया. फोड़ा खतम हो गया! उधर पंडित जी ने अपना बदन गरम देखा, तो उन्होंने न खाना खाया, न स्नान किया. अगले दिन बुखार उन्हें छोड़ भागा!

फिर एक रोज फोड़े और बुखार की फिर मुलाकात हो गई.

फोड़ा बोला—"यार, तूने किस जालिम के पास मुझे भेज दिया! उस अहीर ने तो मुझे देखते ही रगड़ दिया. मैं तो बे मौत मारा गया!"

बुखार ने कहा—"भूख और प्यास के मारे मेरी तो जान ही निकल गई! अब मैं कभी किसी पंडित के पास भूलकर भी नहीं जाऊंगा!"

"मैं भी कान पकड़ता हूं कि किसी अहीर के पास कभी नहीं जाऊंगा!" फोड़े ने कहा.

—माधव पंडित

कहानी

बाजार में डाका

kissekahani.com

आज बंबई एक दिखती है, पर कुछ समय पहले यह सात टापुओं की नगरी थी. इन टापुओं को मिलाने के लिए सौ वर्ष पहले एक हार्बर लाइन की रेलगाड़ी चलाई गई. यह भारत की सब से पुरानी रेल है. इसी के टर्मिनस स्टेशन बोरीबंदर के पास बंबई का सब से महंगा बाजार है—महात्मा फुले मार्केट. अंग्रेजों ने इसका नाम रखा था—क्राफर्ड मार्केट. यहां फल-फूल, साग-सब्जी, मांस-मछली, केक-पेस्ट्री सब मिलते हैं, किंतु खूब ऊंचे दामों. भाव न करना आए, तो नए आदमी का सिर गंजा हो जाए. आज से चालीस बरस पहले भी यह बाजार सब बाजारों से महंगा था.

इसी बाजार में पीर भाई की केक-पेस्ट्री की एक बड़ी दूकान थी. दूकान के ऊपर ही आफिस बनाया हुआ था. रात को वह सो भी जाते थे वहां. एक रात नौकरों के चले जाने के बाद जब वह अकेले ऊपर आकर सोने की तैयारी कर रहे थे तो उन्हें लगा कि उनकी दूकान के शीशे पर कोई जोर-जोर से ठक-ठक कर रहा है. उन्होंने सांस रोककर सुना. फिर वही ठक-ठक की आवाज हुई. पहले पीर भाई ने सोचा कि शायद कोई मिलने आया होगा. फिर सोचा कि हो सकता है कोई जानवर हो. किंतु जब आवाज बढ़ते-बढ़ते दरवाजे पर आ गई और दरवाजा खड़खड़ाने लगा, तो उनका विश्वास पक्का हो गया कि हो न हो कोई चोर है! धड़कते दिल से लपककर उन्होंने हुक्केवाला टेलीफोन और उसका चोंगा उठाया, और कंपित स्वर में बोले—"पुलिस. . . पुलिस! बचाओ, . . .चोर. . .चोर. . ." तभी बहुत जोर से शो केस का कांच कड़कड़ाता हुआ टूटा और उसके हजारों टुकड़े खनखनाते हुए बिखर गए. इस धड़ाके ने रही-सही कसर भी पूरी कर दी. टेलीफोन का चोंगा उनके हाथ से छूट गया और वह बेहोश होकर गिर पड़े.

अजीब संयोग था कि इधर पीर भाई की दूकान का शीशा टूटा और उधर मार्केट की बड़ी घड़ी में एक बजे का घंटा जोर से बजा, और वहां पुलिस के बड़े थाने में खलबली मच गई. उन्होंने बाजार के पास वाले थाने में फोन किया और दो पुलिस गाड़ियां भेज दीं कि मार्केट में भारी डाका पड़ा है—दौड़ो!

सायरन बजाती हुई दो पुलिस गाड़ियां पीर भाई की दूकान के सामने आकर रुकीं. फुटपाथ पर सोने वाले हड़बड़ाकर जाग गए थे. सड़क के कुत्ते भौंकने लगे. हाथों में डंडे लिये पुलिस वाले गाड़ियों से कूद पड़े. एक अंग्रेज सार्जेंट टार्च जलाते हुए बोला—"इसी दूकान में डाका पड़ा है, इसे घेर लो!" सर्चलाइट दूकान पर घुमाई जाने लगी. काफी दौड़धूप के बाद डाकू रंगे हाथों पकड़ा गया, तो सबके आश्चर्य का ठिकाना न रहा! टूटे शीशे में एक मादा भेड़ कान लटकाए हुए बायें-बायें हैरत से देख रही थी. धीरे-धीरे पुलिस वाले आगे बढ़ने लगे. भेड़ को समझ नहीं आ रहा था कि यह सब क्या हो रहा है. किंतु जैसे ही एक जवान पुलिस वाला उसे पकड़ने के लिए लपका कि भेड़ ने ऐसी छलांग लगाई कि वह जमीन पर गिर गया और भेड़ देखते ही देखते

—रोहिताश्व मित्तल—

बाजार में घुस गई.

पुलिस वाले उसके पीछे भागे. गनीमत थी कि भेड़ के गले में घुंघरू बंधे हुए थे, उनकी रुनझुन से उनको पीछा करने में आसानी हो रही थी. भेड़ केक-पेस्ट्री की दूकानों, फल वालों की दूकानों, फिर आम के बाजार से लुकती-छिपती पक्षियों की दूकानों के पास आकर रुक गई. यहां की छोटी-छोटी चिड़ियां भी जाग गईं. पुलिस की भाग-दौड़ से बाजार के सोए हुए दूकानदार बांस के डंडे संभालकर उठ खड़े हुए. उन्होंने समझा कि सचमुच का कोई बड़ा डकैत घुस आया है.

अंत में पुलिस खोजते-खोजते यहां भी पहुंच गई. टार्च लाइट में हांफती भेड़ को भागने का मौका न मिला. अंग्रेज सार्जेंट चिल्लाया —"वो रहा, पकड़ो!" और उसी हारे हुए जवान पुलिस वाले ने लपककर उसे पकड़ लिया.

आखिर उसे पुलिस गाड़ी में लाद दिया गया. भेड़ को गाड़ी में ठंडी हवा का मजा आ रहा था. उसको क्या पता था कि लोग उसे कैदी बनाकर पुलिस स्टेशन ले जा रहे हैं.

भेड़ को पकड़कर थाने में लाया गया. रिपोर्ट लिखने वाले पुलिस अफसर ने अपना चश्मा ठीक करके भेड़ को देखा, तो उसका सिर चक्कर खा गया. गुस्से में बोला—"यह क्या मसखरी है! तुम लोग चोर की जगह भेड़ क्यों पकड़ लाए?" इस पर अंग्रेज सार्जेंट ने विश्वास दिलाया, "नहीं, सर, यही भेड़ असली चोर है, इसी ने पीर भाई का शीशा तोड़ा है!"

अफसर ने अपनी मोटी कलम दवात में डुबाते हुए कहा—"पर आज तक पुलिस के इतिहास में ऐसा नहीं हुआ कि कोई जानवर मुजरिम बनकर आया हो. कल अखबारों में छपेगा, तो लोग क्या कहेंगे? सोच लें. मेरा क्या, मैं लिख देता हूं!"

'एक मोटी - ताजी भेड़, गले में घुंघरू. पीर भाई का शो केश तोड़ने का जुर्म. नाम और मालिक का पता नहीं. कमरा नं. ९ में कैद.' डायरी में दर्ज कर लिया गया.

फिर दो पुलिस वाले भेड़ को पकड़कर जेल के

कमरा नंबर ९ में ले गए. वहां कोई और कैदी न था. एक सिपाही सूखी घास उसके सामने रखकर और दरवाजे पर एक बड़ा-सा ताला लगाकर चला गया.

●

उन दिनों बंबई में ट्रामें चला करती थीं. कोई चार बजे पहली ट्राम घड़घड़ाती हुई निकल गई, तो रात के पहरेदार सिपाही ने सभी कमरों को देखना शुरू किया कि सब कैदी ठीक-ठाक तो हैं. तभी उसे हल्की-हल्की मिमयाने की आवाज सुनाई दी. वह रुक गया और कान लगाकर सुनने लगा. कमरा नंबर ९ से आवाज आ रही थी. वह जल्दी से वहां गया और टार्च जलाकर देखा. वहां एक भेड़ की जगह दो भेड़ें थीं—एक मां और एक बच्चा. भेड़ मेमने को बड़े प्यार से चाट रही थी.

सिपाही ने एक की जगह जब दो भेड़ें देखीं या एक की जगह दो कैदी, तो झट दौड़कर पुलिस अफसर के कमरे में गया और अपनी आंखों से जो देखा, वह जल्दी जल्दी कह सुनाया. अफसर घबराकर बोला—"अब क्या होगा? कैदी तो एक भेड़ थी, उसका बच्चा नहीं था." तभी वहां दूसरे सार्जेंट और सिपाही भी आ गए. एक अजीब तर्क शुरू हो गया. कैद करते समय एक मोटी-ताजी भेड़ थी और अब एक भेड़ और एक मेमना दो हो गए! मेमना पुलिस की डायरी में दर्ज ही नहीं है. फिर कैद कैसे हुआ? गलत रिपोर्ट लिखना स्वयं एक जुर्म है. हेड क्वार्टर में मालूम पड़ेगा, तो वे छोड़ेंगे नहीं.

इस तरह दो घंटे बहस-बाजी चलती रही और पुलिस वालों की समस्या अधिक से अधिक उलझती गई. कोई छह बजे के करीब एक लड़का अफसर की केबिन का दरवाजा झटके से खोलता हुआ अंदर आया. वह फटे हुए पैजामे-कुर्ते में था. बाल बिखरे हुए थे और गालों पर आंसुओं के निशान. उसने साहस बटोरकर अफसर से कहा—"मुझे मेरी भेड़ लौटा दो!"

अफसर ने इतना साहसी लड़का नहीं देखा था जो थाने में आकर इस तरह बात करे. उसने सिर से पांव तक उसे देखा, फिर पूछा—"तुम्हारी भेड़? किसने बताया कि तुम्हारी भेड़ यहां है?"

"नाके के सिपाही ने."

"अच्छा अच्छा, सिपाही ने! क्या नाम है तुम्हारा?"

"अब्बू!"

"और तुम्हारी भेड़ का भी कोई नाम है?"

"हां, झबरी!" इतना कहते ही अब्बू ने रोना शुरू कर दिया. अफसर को दया आ गई. उसने आज्ञा दी कि उसकी भेड़ लाई जाए, जिससे वह पहचान सके कि उसकी ही है या किसी और की.

दो सिपाही दौड़कर गए और उसकी भेड़ और मेमने को ले आए. एक सिपाही झबरी को घुंघरू के पट्टे से पकड़े हुए था और दूसरा मेमने को गोद में उठाए हुए.

अब्बू का रोना रुक गया. मेमने को देखकर उसकी आंखें चमक उठीं. लपककर उसने मेमने को गोद में उठा लिया. फिर झबरी की तरफ देखकर खुशी से चहका: "अरे झबरी!"

किंतु कानून के हाथ बड़े लंबे होते हैं. अब्बू अभी अपनी झबरी और मेमने को नहीं ले जा सकता था. अफसर ने समझाया कि झबरी ने पीर भाई काशो-केस चकनाचूर कर दिया है, वहां की केक-पेस्ट्री भी नष्ट कर दी है. वह अपने पिता को ले आए, ताकि इन सबका हर्जाना भरकर वह उन दोनों को छुड़ा ले.

यह तो बहुत बुरा समाचार दिया पुलिस अफसर ने. अब्बू की आंखों से आंसुओं की झड़ी लग गई. पुलिस वालों ने उसे चुप कराने की कोशिश की, पर जितना ही वे उसको चुप कराते वह उतने ही जोर से रोने लगता. अंत में सबने मिलकर खोपड़ी लड़ाई कि मेमने के ऊपर कोई केस नहीं है, उसने कोई गुनाह नहीं किया है, अतः वह उसे ले जा सकता है. दूसरे सार्जेंट ने कहा—"अच्छा, तुम मेमने को जल्दी से घर ले जाओ और अपने पिता को भेज दो."

इस तरह पुलिस वालों ने सोचा कि उन्होंने एक ईंट से दो कबूतर मारे. उनका रेकार्ड भी ठीक बना रहेगा और अब्बू का पिता जुर्माना भी भर जाएगा.

हुक्म पाते ही अब्बू मेमने को अपनी बांहों में दबाए वहां से चला गया. उसके चले जाने के बाद थाने में सबने चैन की सांस ली कि आखिर एक नाजुक परिस्थिति से छुटकारा मिला.

झबरी अपनी आंखों से सारा तमाशा देख रही थी. रात भर उसने अपने को बहुत रोककर रखा था; किंतु जब उसके सामने उसका प्यारा मालिक रोता हुआ आया और उसके बच्चे को उठाकर और उसको अकेला छोड़कर चला गया, तो उससे भी न रहा गया. बस, उसने भी पूरी ताकत से अपने को छुड़ाने के लिए सींग मारने शुरू किए. गले का पट्टा छूटते ही वह छटपटाकर भाग खड़ी हुई. अफसर चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा कि भेड़ को गिरफ्तार करो! पर वह भी बिजली की तरह कूदती-उछलती किसी के हाथ नहीं आई और इसी भगदड़ में छलांग मारकर थाने से बाहर निकल गई.

बाहर आकर झबरी कुलांचें भरती हुई भागने लगी. कुछ दूर आकर उसने अब्बू को इधर-उधर देखना शुरू किया. वह दूर जाता दिख गया. वह एक बार जोर से मिमयाई. अब्बू ने सुन लिया. वह पीछे मुड़कर चिल्लाया: "झबरी, भाग भाग, जल्दी भागकर आ!"

कुछ ही क्षणों में वे तीनों साथ-साथ जल्दी-जल्दी चलने लगे, जितनी जल्दी उनकी दुबली-पतली टांगें चल सकती थीं. थाने से कुछ सिपाही उनके पीछे भागे भी थे, पर सामने एक ट्राम के आ जाने से वे रास्ता न पार कर सके. और जब ट्राम निकल गई, तब तक वे तीनों एक गली में मुड़कर नजरों से ओझल हो गए थे. ●

'पराग', टाइम्स आफ इंडिया, बंबई–१.

kissekahani.com

कहानी

सबूत

—विद्वान् के. नारायणन्

"ज़रा यह दवा दीजिएगा," खरीदारों की भीड़ के बीच से एक लड़की ने हाथ बढ़ाते हुए कहा. उसके हाथ में दस रुपये का एक नोट था और एक चिट, जिसपर दवा का नाम लिखा हुआ था.

दूकान के मालिक तंकप्प पिल्लै ने लड़की के हाथ से नोट और चिट लेकर नोट को तो लापरवाही से कैश बॉक्स के अंदर डाल दिया और चिट को हाथ में रखे-रखे देर से आने वाले नौकर को डांटने में लग गए. थोड़ी देर बाद उन्होंने अलमारी से उस चिट पर लिखी दवा की बोतल उठाई.

तंकप्प पिल्लै बड़े भुलक्कड़ स्वभाव के थे. इस बीच वह बिलकुल भूल ही चुके थे कि वह लड़की से दस रुपये का नोट लेकर कैश बॉक्स में डाल चुके हैं. उन्होंने उस गरीब-सी दिखने वाली लड़की से पूछा—"इस दवा के सवा नौ रुपये लगेंगे. दे दूं?"

लड़की ने बड़ी उतावली से कहा—"हां हां, दे दीजिए!"

तंकप्प पिल्लै ने दवा की बोतल उस लड़की के हाथ में थमा दी. लड़की बड़ी जल्दी में थी. वह बाकी पचहत्तर पैसे लेना भी भूल गई और दवा की बोतल लिये घर की ओर दौड़ पड़ी.

मुश्किल से दो-तीन मिनिट बीते होंगे कि सहसा तंकप्प पिल्लै को ख़याल आया कि उन्होंने उस लड़की से दवा के दाम तो लिये ही नहीं! वह नौकर को बुलाकर बोले—"अभी-अभी एक लड़की यहां से दवा लेकर गई थी न, उसने दवा के दाम नहीं दिये हैं. जल्दी दौड़कर जा और उससे रुपये ले आ!"

नौकर जाने वाला ही था कि उसे वह लड़की दूकान की ओर तेजी से आती हुई दिखाई दी. सड़क के मोड़ तक जाते-जाते लड़की को याद आ गया था कि उसने बाकी पचहत्तर पैसे दूकानदार से नहीं लिये हैं.

लड़की को देखते ही तंकप्प पिल्लै ने डांटते हुए पूछा, "क्यों री, तू दवा ले के रुपये दिए बिना चली गई!"

लड़की को बड़ा आश्चर्य हुआ. बोली—"रुपये नहीं दिए? मैंने दवा लेने के पहले ही आपके हाथ में रुपये दे दिए थे. मैं बाकी पचहत्तर पैसे लेना भूल गई थी. उसी को लेने वापस आई. बाकी पचहत्तर पैसे दीजिए."

तंकप्प पिल्लै को गुस्सा आ गया. वह कड़ककर बोले—"चोरी और सीनाजोरी! रुपये दिए बिना

धकमा देकर चली गई और अब बाकी पैसे मांगती है? अच्छा तमाशा है!"

इस बीच इस झगड़े को देखने के लिए दूकान के सामने भीड़ इकट्ठी होने लगी. एक पुलिस का सिपाही भी, जो उधर से होकर गुजर रहा था, रुक गया.

"देख, लड़की! झूठ बोलेगी, तो पुलिस के हवाले कर दूंगा! अगर अब भी मान ले कि तूने रुपये नहीं दिए, तो छोड़ दूंगा. अभी न हों, तो दो-तीन दिन बाद भी रुपये चुका देगी, तो चलेगा."

"नहीं, नहीं, यह बिल्कुल झूठ है! मुझे खूब याद है कि मैंने आपके हाथ में दस रुपये का नोट दिया था, दवा लेने से पहले. जरा याद करके देखिए!"

अब पुलिस के सिपाही ने दखल दिया—"क्या इतने बड़े दूकानदार होकर यह झूठ बोलेंगे?"

"तो क्या मैं झूठ बोलूंगी? हम गरीब हैं, तो क्या हुआ, ईमानदार हैं!"

"अब ज्यादा बातें बनाने से कोई फायदा नहीं. या तो रुपये चुका दे या दवा वापस कर दे!" तंकप्प पिल्लै अधीर हो रहे थे.

"यह कैसे हो सकता है? मैं तो रुपये दे चुकी हूं. दुबारा कैसे दूंगी? तिस पर मुझे यह दवा जल्दी ही ले जानी है. मेरी मां सख्त बीमार है."

"ये सब बातें सुनने का मेरे पास वक्त नहीं है."

तभी सिपाही ने लड़की से पूछा—"तुम्हारे पास क्या सबूत है कि तुमने रुपये दे दिए हैं? कैश बिल है?"

"कैश बिल? वह तो इन्होंने दिया ही नहीं था."

सिपाही तंकप्प पिल्लै की तरफ मुखातिब हुआ—"क्या इसका कहना सही है?"

"जिस दिन खरीदारों की ज्यादा भीड़ होती है, उस दिन कैश बिल बनाने का वक्त ही नहीं मिलता."

"तो आप अपनी याददाश्त पर निर्भर रहते हैं! तब तो यह मुमकिन है कि आपने इस लड़की से रुपये ले लिये हों और भूल गए हों?"

"यह कैसे हो सकता है? यदि मैंने इससे रुपये लिये होते, तो क्या इतनी जल्दी भूल जाता? यह तो साफ है कि यह लड़की सरासर झूठ बोल रही है!"

यह सुनकर लड़की का चेहरा तमतमा उठा.

सिपाही और भीड़ के अन्य लोग यह निर्णय नहीं कर सके कि कौन झूठ बोल रहा है?

सहसा लड़की का चेहरा चमक उठा. वह बोली—"अभी यह मुझे झूठी ठहरा रहे हैं, अगर मैं यह साबित कर दूं कि मैं रुपये दे चुकी हूं, तो क्या यह अपनी गलती मानकर मुझसे माफी मांगेंगे?"

तंकप्प पिल्लै बोले—"क्यों नहीं, क्यों नहीं, जरूर! यही नहीं, मैं तुम्हें पुरस्कारस्वरूप बीस रुपये और दूंगा!"

वह लड़की सिपाही से बोली—"मैंने दूकानदार के हाथ में जो दस रुपये का नोट दिया था उसकी क्रम-संख्या 'सी/ ६८–६८ ६८ ६८' है. आप कैश बाक्स खोलकर देखिए, वह नोट वहीं होगा."

कैश बाक्स खोलकर देखा गया, तो उसमें लड़की के बताए नंबर का नोट मौजूद था.

लड़की की बात सही निकली. सबको बेहद आश्चर्य हुआ कि लड़की नोट की क्रम-संख्या कैसे ठीक-ठीक याद रख सकी!

लड़की बोली—"यह नोट मेरे पास पिछले पंद्रह दिनों से है. पिता जी ने स्कूली पाठ्य-पुस्तक खरीदने के लिए मुझे दिया था. पुस्तक छपकर नहीं आई थी, इसलिए वह नोट मेरे पास ही रहा. आज सवेरे मां को जोर का बुखार चढ़ आया था. घर में और रुपये थे नहीं, इसलिए उसी नोट को लेकर दवा खरीदने आई थी. मैंने उस नोट को अपनी नोट बुक के अंदर रख छोड़ा था. रोज पुस्तक खोलते वक्त उसे देखा करती थी, इसलिए उसकी क्रम-संख्या मुझे याद हो गई थी. इस संख्या में एक विशेषता है—'सी/ ६८–६८ ६८ ६८'. 'सी' के नीचे जो '६८' संख्या है वही बाद की संख्या में तीन बार आई है. इसलिए वह संख्या मुझे खूब याद हो गई थी."

लड़की की याददाश्त और होशियारी पर सब बड़े प्रसन्न हुए. तंकप्प पिल्लै को भी अपनी भूल पर पछतावा हुआ. उन्होंने लड़की से माफी मांगते हुए बाकी पचहत्तर पैसों के अलावा अपने वादे के मुताबिक उसे बीस रुपये और देने चाहे. किंतु लड़की अतिरिक्त रुपये लेने से इनकार करते हुए बोली—"मुझे ये रुपये नहीं चाहिएं, पर बदले में मैं आपसे यही चाहती हूं कि भविष्य में कभी किसी पर झूठा इलजाम लगाने के पहले खूब सोच लें कि स्वयं आप ही तो गलती नहीं कर रहे हैं!"

●

टी. सी. २०१९४, गांधारी अम्मां कोइल रोड, पुत्येनचानथाई, त्रिवेंद्रम्–१ (केरल).

ईमानदार आदमी का सोचना लगभग हमेशा न्याय पूर्ण होता है.
—क्लो

●

आदमी पहले ईमानदार और नेक बने, और बाद में शिष्टता और सभ्यता की पालिश चढ़ाए.
—कंफ्यूशियस

१,००० रुपये के नकद इनाम

पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २८

सर्वशुद्ध या निकटतम पूर्ति पर ७०० रु., न्यूनतम अशुद्धियों पर ३००रु.

ज्ञानवर्धन व मनोरंजन के साथ साथ धन भी

इस प्रतियोगिता के संकेत-वाक्य बच्चों एवं किशोरों के लिए प्रकाशित पुस्तकों से ही लिये गए हैं. इसलिए जो पाठक सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ते होंगे, उनके लिए खेल-खेल में एक हजार रुपये जीतने का यह स्वर्ण अवसर है.

सामने के पृष्ठ पर १२ संकेत-वाक्य दिए गए हैं. प्रत्येक वाक्य में एक शब्द का स्थान डैश लगाकर छोड़ दिया गया है. उसी पृष्ठ पर एक पूर्ति-कूपन है, जिसमें दो पूर्तियां दी गई हैं. जिस क्रमांक का संकेत-वाक्य है, प्रत्येक पूर्ति में उसी क्रमांक के आगे दो शब्द दिए गए हैं. उनमें से एक शब्द सही है, और दूसरा गलत. बस, आप गलत शब्द पर × का निशान लगा दीजिए.

'पराग उद्धरण प्रतियोगिता' में भाग लेने के नियम और शर्तें

१–एक पूर्ति-कूपन में दो पूर्तियां दी गई हैं. आप एक पूर्ति भरें या दोनों—पूरा कूपन बाहरी रेखाओं पर काटकर भेजना होगा. पूर्तियां 'पराग' में प्रकाशित पूर्ति-कूपनों पर ही स्वीकार की जाएंगी. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को क्रास कर दीजिए, और उसके नीचे पूर्ति क्रमांक आदि कुछ न भरिए.

२–पूरे कूपन की दोनों पूर्तियों का प्रवेश-शुल्क १ रुपया और केवल एक पूर्ति का प्रवेश-शुल्क ५० पैसे है. दोनों में से किसी भी पूर्ति को आप पहली मान सकते हैं. एक ही नाम से आप चाहे जितनी पूर्तियां भेज सकते हैं. एक ही लिफाफे में अनेक नामों और परिवारों की पूर्तियां भेजी जा सकती हैं. लिफाफे के अंदर रखी सभी पूर्तियों का सम्मिलित प्रवेश-शुल्क एक ही पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर, या नकद रसीद से भेज सकते हैं. किंतु ऐसी सभी पूर्तियों के नीचे कुल पूर्तियों की संख्या, उनके क्रमांक, और पूर्ति-कूपन में पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर की रसीद या नकद रसीद का नंबर लिखना अनिवार्य है. पोस्टल आर्डर, या डाकखाने से मिली मनी आर्डर की रसीद, या नकद रसीद पूर्तियों के साथ अवश्य नत्थी करके भेजिए. डाक-टिकट या करेंसी नोट प्रवेश-शुल्क के रूप में स्वीकार नहीं किए जाएंगे. आप कार्यालय में नकद रुपया जमा करके या डाक-खर्च सहित मनी आर्डर भेजकर ५० पैसे मूल्य की चाहे जितनी नकद रसीदें प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें अगले चार महीने तक, प्रवेश-शुल्क के रूप में, पूर्तियों के साथ नत्थी कर सकते हैं.

३–स्थानीय प्रतियोगी अपनी पूर्तियां 'टाइम्स आफ इंडिया भवन' के प्रवेश द्वार पर बनी 'स्थानीय प्रवेश पेटी' में डाल सकते हैं. स्थानीय या डाक से आने वाली सभी पूर्तियों के लिफाफों के खुलने वाली तरफ भेजने वाले का पता, तथा उनके पीछे यह पता लिखा होना चाहिए—**'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २८', प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. २०७, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई–१.** मनी आर्डर फार्मों और रजिस्टरी से भेजे जाने वाले लिफाफों पर 'पोस्ट बैग नं. २०७' न लिखें. पोस्टल आर्डर क्रास कर दें. उसमें 'पाने वाले' के स्थान पर **'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. २८'** और 'पोस्ट आफिस' के आगे—**'बंबई–१'**—लिखें. कृपया संपादक के नाम पूर्तियां या शुल्क न भेजें.

४–प्रथम पुरस्कार ७०० रु. उन प्रतियोगियों को मिलेगा, जिनकी पूर्तियों में संकेत-वाक्यों के सही पूरक शब्दों पर निशान नहीं होंगे, और सभी गलत शब्दों पर निशान लगे होंगे. यदि ऐसी कोई पूर्ति प्राप्त न हुई, तो उसके निकटतम अशुद्धियों वाली पूर्तियों पर प्रथम पुरस्कार दिया जाएगा. द्वितीय पुरस्कार ३०० रु. प्रथम पुरस्कार प्राप्त पूर्तियों से निकटतम अशुद्ध पूर्तियों पर प्रदान किया जाएगा. समान अशुद्धियों के एक से अधिक विजेताओं को घोषित पुरस्कार बराबर बराबर बांटे जाएंगे.

५–अपना नाम और पता प्रत्येक पूर्ति-कूपन पर सुपाठ्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखिए. डाक में खो जाने वाली, विलंब से प्राप्त होने वाली, या गंदी व कटी-फटी पूर्तियां प्रतियोगिता में शामिल नहीं होंगी.

६–सभी पूर्तियां कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि सोमवार, ८ मार्च १९७१ है. अपनी पूर्तियां भेजने के लिए अंतिम तिथि की प्रतीक्षा न कीजिए. निर्धारित अवधि के प्रारंभिक दिनों में ही पूर्तियां भेज देने से आप अनेक भूलों से बच सकते हैं. सर्वशुद्ध शब्दावली तथा संबंधित पुस्तकों व पुरस्कार विजेताओं की सूची 'पराग' के मई १९७१ के अंक में प्रकाशित की जाएगी.

७–प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता से संबंधित प्रत्येक विषय में प्रतियोगिता संपादक का निर्णय अंतिम रूप से मान्य होगा. वैधानिक रूप से विवादास्पद विषयों में बंबई के संबद्ध न्यायालय को ही निर्णय देने का अधिकार होगा.

८–नियमों के प्रतिकूल तथा पूर्ति-कूपनों में आवश्यक विवरण से रिक्त कोई भी पूर्ति प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं की जाएगी. 'पराग' तथा संबद्ध प्रकाशनों के कर्मचारियों को इसमें भाग लेने का अधिकार नहीं होगा. ●

डाक-टिकटों पर फूल

—जितेंद्रकुमार चतुर्वेदी

बच्चो, तुमने अपनी मां को पूजा करते समय देखा होगा कि वह भगवान की मूर्ति पर कुछ फूल चढ़ाती हैं. फूल जन्म के समय भी उपयोग में लाए जाते हैं और मृत्यु के समय भी. इस प्रकार जीवन के प्रत्येक अवसर पर हम फूलों का उपयोग करते हैं.

फूलों के गमलों द्वारा हम घर की शोभा बढ़ाते हैं. बड़े-छोटे बगीचों में विभिन्न प्रकार के फूल उगाते हैं. इस प्रकार के विभिन्न फूलों के चित्रों के डाक-टिकट विभिन्न देशों द्वारा जारी किए जाते हैं. ऐसे कुछ टिकटों का परिचय यहां प्रस्तुत किया जा रहा है :

चित्र नं. १, २, ३ पर अंकित हैं पोलैंड द्वारा जारी किए गए २० ग्रोजी, ३० ग्रोजी एवं ४० ग्रोजी मूल्य के डाक-टिकट. इन टिकटों पर क्रमशः 'सायक्लमेन पेर्सकी', 'फेजिया आग्रेडोवा' तथा 'मानिक्यू' गुलाब के चित्र अंकित हैं. चित्र नं. ४ पर पोलैंड के १.५५ ज्लोटी मूल्य के एक डाक-टिकट पर 'बिगोनिया बलविएस्टा' नामक लाल-पीला फूल अंकित है.

नं. ५ से १६ तक के चित्रों पर अंकित हैं बल्गेरिया द्वारा विभिन्न पुष्पों के सम्मानार्थ जारी किए गए विभिन्न डाक-टिकट. प्रथम तीन टिकटों (नं. ५, ६, ७) पर मनमोहक लाल एवं गुलाबी रंग के विभिन्न गुलाब के फूलों के चित्र हैं. इन तिरंगे टिकटों के मूल्य क्रमशः १ स्टोटिंकी, २ स्टोटिंकी एवं ५ स्टोटिंकी हैं. १ स्टोटिंकी मूल्य के दो टिकटों (नं. ८, ९) पर 'डहलिया बेरिबिलिस' एवं 'क्लेमेटिस इन्टेग्रिफोला' नामक फूलों के चित्र अंकित हैं. दो स्टोटिंकी मूल्य के अन्य चार टिकटों (नं. १० से १३) पर क्रमशः 'नार्सिसस पोएटिकस', 'लिग्रोटो पोडियम एल्पिनम', 'मेन्टियाना लूटिया' एवं 'डिजिटेलिस परपुरिया' नामक फूलों के चित्र अंकित हैं. इस अंतिम टिकट में फूलों की आकृति सर्पों के निवास स्थान बांबी की आकृति से मिलती-जुलती है. अंतर केवल इतना है कि सर्पों की बांबी पर निकास द्वार का मुख ऊपर की ओर होता है, जब कि इस फूल में उस प्रकार की आकृति नीचे की ओर है. अन्य तीन टिकटों (नं. १४, १५, १६) पर क्रमशः 'प्रिमुला डिओरम', 'टूलिपा रोडोपिया' एवं 'लिलियम जैकी' नामक फूलों के चित्र अंकित हैं.

चित्र नं. १७, जो पोलैंड का डाक-टिकट है 'आर्निका मोन्टाना' नामक फूल का चित्र अंकित है. इस टिकट का मूल्य ४० ग्रोजी है. भारत में इसे सूरजमुखी कहते हैं.

चित्र नं. १८, १९ एवं २० पर अंकित हैं हंगरी द्वारा जारी किए गए तीन विभिन्न फूलों के चित्रों वाले डाक-टिकट. इन टिकटों के मूल्य २० फिलर, २० फिलर एवं ३० फिलर हैं. इन टिकटों पर क्रमशः 'गुलाब', 'किटईबेलिया विटिफोलिया' तथा 'केटलिया वार्स्जेविजी' नामक फूलों के चित्र अंकित हैं. चित्र नं. २१ तीन गुलाबों वाला डाक-टिकट है. हंगरी द्वारा जारी किए गए इस टिकट का मूल्य २ फोरिंट है.

अल्बानिया द्वारा जारी किए गए दो टिकटों (नं. २२, एवं २३) पर गुलाबी एवं पीले गुलाब के चित्र अंकित हैं. इन टिकटों के मूल्य २५ क्विंटर्स एवं ३५ क्विंटर्स हैं. फिलीपाइन द्वारा जारी किए गए २० सेंटावोस मूल्य के टिकट (नं. २४) पर 'संगुमे (डेन्ड्रोडियम एनोसमम)' नामक अर्धखिले फूलों के चित्र अंकित हैं. घाना द्वारा जारी किए गए १ शिलिंग मूल्य के टिकट (नं. २५) पर अदरक की कलियों एवं फूलों के चित्र अंकित हैं. मकाओं के एक टिकट (नं. २६) पर 'सिन्नामेमम केम्फरा' नामक पुष्पों के चित्र अंकित हैं जिनका उपयोग दवाइयां बनाने के लिए होता है. मकाओं के इस हीराकार टिकट का मूल्य २० अवोस है.

चित्र नं. २७ से ३० तक, रोमानिया द्वारा जारी किए गए डाक-टिकटों पर, विभिन्न फूलों के चित्र अंकित हैं. इन टिकटों में से प्रथम पर 'पेलरगोनियम झोनलेएट' नामक फूल का चित्र अंकित है. अन्य तीन टिकटों पर गमलों में लगे हुए विभिन्न पुष्पों को दर्शाया गया है. इन टिकटों पर क्रमशः 'निकोटिआना अलाटा', 'पेलरगोनियम', एवं 'एल्विया ग्रेसिलिड' नामक पुष्पों के चित्र अंकित हैं. इन चारों टिकटों के मूल्य क्रमशः १० बानी, १० बानी २० बानी एवं ४० बानी हैं.

रवांडा गणतंत्र द्वारा जारी किए गए दो टिकटों पर क्रमशः 'एचिनोप्स बिओएटी' तथा 'ओरचिडी डायफानंदी' नामक दो फूलों के चित्र अंकित हैं. इन टिकटों के मूल्य १० सेंटाइम्स एवं २० सें. हैं (चित्र नं. ३१ एवं ३२). पोलैंड द्वारा जारी किए गए दो अन्य आकर्षक टिकटों पर क्रमशः 'पसीफ्लोरा गेड्रागुलरिस' एवं 'स्टेलिजिया रेजिनी' नामक फूलों के चित्र अंकित हैं. इन रंग-बिरंगे टिकटों के मूल्य २० ग्रोजी एवं ३० ग्रोजी हैं (चित्र नं. ३३ एवं ३४). ●

२५ पीरगली इंदौर–४.

समदर्शी (पृष्ठ ३९ से आगे)

और पट्टी फेंककर स्कूल चला आया था. कुछ ही देर में उसे अनुभव होने लगा कि मम्मी की बात न मानकर उसने भयंकर भूल की है. दर्द इतना था कि वह आंख उठाकर भी न देख सकता था. कक्षा में बैठा किताब या कापी पर नजर दौड़ाता, तो सतरें गडमड होकर रह जातीं. बाहर निकलता, तो धूप की चौंध में आंखें चिर-मिरा जाती थीं. लेकिन जिद थी कि 'समदर्शी' को कुछ कहने का मौका न मिले, बस!

लेकिन उसे आंखें टमकारते देखकर बंशी मुस्करा उठता था. उस मुस्कराहट में भी एक आवाज होती थी, जो सिर्फ सतीश ही सुन सकता था. सतीश के साथियों ने उसको कोसा—"गजब किया तुमने, सतीश, इतनी जल्दी आंख पर से पट्टी उतार दी. कुछ हो गया तो?"

"हां, कुछ हो गया तो? कुछ हो गया तो?" सतीश आंखों को हथेली से ढांपकर बुदबुदाया. सारा दिन उसने बेचैनी में गुजारा. घर गया तब उसकी आंख दर्द के मारे लगभग बंद हो चुकी थी.

चौबीस घंटे धमाचौकड़ी मचाने वाला जाते ही बिस्तर पर दराज हो गया. उसे कुछ होश न था. कब मम्मी-पापा आए, कब डाक्टर को बुलाया गया, कब आंख पर वापस पट्टी बंधी? उसे कुछ पता न था. लगता था वह सो भी रहा है और जाग भी रहा है. कुछ आवाजें दूर किसी अन्य दुनिया से आती सुनाई पड़ती थीं. लेकिन परिचित-सी. परिचित ही थीं. डाक्टर अंकल ही की थीं. वही उसका इलाज कर रहे थे. डैडी के गहरे दोस्तों में से थे. इसी लिए शायद डैडी को डांट रहे थे—"गंगोली, तुम भी निहायत बेपरवाह और बेवकूफ हो! भाभी पर सारी जिम्मेदारी छोड़ दी. जरा ख्याल रखना था तुम्हें. पता नहीं तुम्हें कि बच्चे अपनी मम्मियों की कब पर-वाह करते हैं! अब भुगतो. दुआ करो कि आपरेशन कामयाब हो . . . ."

"आपरेशन?" मम्मी की चीख सुनाई दी.

"हां, भाभी, सुबह आपरेशन होगा, वरना. . ."

"वरना क्या?" पापा भी अधीर हो उठे थे.

"आंख की झिल्ली से खून रिस रहा है, जो बड़ा खतरनाक साबित हो सकता है!" डाक्टर अंकल कह रहे थे. उनकी आवाज सुनकर सतीश के कानों में भी घंटियां बज उठीं—बड़ा खतरनाक. . .बड़ा खतरनाक साबित हो सकता है. . .बड़ा खतरनाक! उफ, मेरे भगवान! अब मैं क्या करूं? क्या मैं भी समदर्शी बन जाऊंगा? बंशी की तरह. जरूर उसकी बद्दुआ लगी है! तभी तो मेरी आंख घायल हुई. लेकिन नहीं, वह बद्दुआ क्यों करने लगा? मैं ही उसे तंग करता था, चिढ़ाता था. उसने तो मुझे एक बार ही चिढ़ाया था, दूसरी बार सिर्फ मुस्कराया था. मैं न चिढ़ाता, तो वह भी क्यों चिढ़ाता मुझे? उसने हमेशा सहनशीलता से काम लिया था, पर मैं ही. . .हां, मैं ही. . .हां, मैंने ही भूल की. काश मैं ही दो-चार दिन के लिए उसकी तरह सहन कर पाता. आंखों से पट्टी न खोलता. अब न जाने क्या होगा? आपरेशन में क्या होगा? कहीं आंख चली गई, तो! . . .वह इन्हीं विचारों में था कि नींद ने उसे दबोच लिया. सुबह जब उसे अस्पताल ले जाने की तैयारी होने लगी, तो वह मुंह से कुछ न बोला, न उसने हैरत का इजहार किया और न प्रश्नों की बौछार.

आपरेशन हुआ और सफल रहा. डाक्टर अंकल ने पापा को बधाई देते हुए कहा —"भगवान का शुक्र है, गंगोली, आपरेशन कामयाब रहा. लेकिन अब तो भगवान के लिये पंद्रह रोज पट्टी न खोलने देना."

पापा हर्ष-विह्वल हो कुछ कहने जा रहे थे कि सतीश बीच में ही बोल उठा—"वादा करता हूं, डाक्टर अंकल! जब तक आप नहीं कहेंगे, पट्टी नहीं खोलूंगा."

"नो. . .नो. . .मुझे तुम पर विश्वास नहीं, यू आर ए नोटी ब्वाय!"

"नहीं, डाक्टर अंकल, अब मुझे नसीहत मिल चुकी है!" सतीश बोला.

डाक्टर अंकल मुस्कराकर रह गए. उन्होंने इसे भी सतीश की शरारत समझकर टाल दिया और फिर पापा को नए सिरे से समझाने लगे.

●

जितने दिन सतीश की आंखों पर पट्टी बंधी रही वह विभिन्न विचारों में खोया रहा. 'समदर्शी' अब उसे बंशी के नाम से याद आता था.

जब आंखें स्वस्थ हो गईं, तो वह दौड़ा स्कूल गया और अपने साथियों से सबसे पहले बंशी के बारे में पूछा.

साथी पूर्व आदत के अनुसार बोले—"कौन, वह काना समदर्शी! आज उसकी पूछ कैसे हो रही है?"

"खबरदार, जो फिर उसे समदर्शी या काना कहा!" इतने में बंशी आता दिखाई दिया, तो सतीश लपककर उसके पास पहुंचा और उसे बांहों में भर लिया—"मेरे अच्छे दोस्त! मुझे माफ कर दो. मैं नाहक तुम्हें परेशान करता रहा. अब मैं तुम्हें कभी न चिढ़ाऊंगा!"

"क्यों?" बंशी सतीश के इस व्यवहार से हैरान रह गया था.

"इसलिए, मेरे भाई, कि अब मेरी आंखों से पट्टी हट चुकी है. वह एक पर्दा था जो हमारे बीच पड़ा था. अब मैं इन नई आंखों से प्यार ही प्यार देख रहा हूं. विश्वास करो, बंशी, मेरी इन नई आंखों में देखो. क्या इनमें तुम ही तुम दिखाई नहीं दे रहे हो?"

"हां, सतीश, तुम ठीक कहते हो . . ." भाव-विह्वल हो बंशी सतीश से लिपट गया. ●

पन्ना निवास, लोहारपुरा, जोधपुर.

भालूमल की कार

भालूमल ने कार खरीदी,
उस पर हुए सवार;
चले देखने पिक्चर ले कर
अपना सब परिवार!

बीच राह में ठप्प हो गई,
पड़े लगाने धक्के!
शहर पहुंच कर कार बेच दी,
छूटे ऐसे छक्के!

—विनोद रस्तोगी

नन्हे-मुन्नों के लिए नए शिशुगीत

पिछले कई वर्षों से 'पराग' में शिशु गीत छापे जा रहे हैं. इन शिशु गीतों के चयन में बड़ी सावधानी बरती जाती है. क्योंकि शुद्ध शिशु गीत लिखना उतना आसान नहीं है, जितना समझा जाता है, इसलिए अच्छे गीत बहुत कम लिखे जाते हैं. ये गीत ऐसे होने चाहिएं कि इन्हें चार से छह साल तक के बच्चे आसानी से जबानी याद कर लें और अन्य भाषा-भाषी बड़े बच्चे भी इनका आनंद ले सकें. इन से मुहावरेदार हिंदी सरलता से जबान पर चढ़ जाती है.

मुर्ग मुसल्लम

मुर्गे जी होटल में पहुंचे,
मुर्गी भी थी साथ;
बैरा मीनू लगा बांचने,
नचा-नचा कर हाथ!

लेकिन 'मुर्ग मुसल्लम' भी जब
उनको पड़ा सुनाई,
होश उड़े, बोले झट दोनों—
"भूख नहीं है, भाई!"

—पूनम तिवारी

सुद्दू-बुद्दू

सुबह हुई तो बुद्दू बोला,
"लो अब आई रात!
क्यों जी, मैंने गलत कहा है?
तुम सच कह दो बात!"

चापलूस सुद्दू तब बोला,
"देखो तो आकाश;
चाद खिला है, और खिले हैं
तारे उसके पास!"

—श्रीप्रसाद

kissekahani.com

kissekahani.com

मूड नहीं

चुहिया रानी, बड़ी सयानी,
बिल में चर्खा काते,
बाहर आकर बिल्ली मौसी,
करती मीठी बातें!

'चुहिया रानी, आओ देखो,
मैं हूं क्या क्या लाई?
लड्डू-पेड़े, सोहन हलवा,
संग में दूध-मलाई.'

चुहिया रानी हंस कर बोली,
"बहुत शुक्रिया तेरा,
मगर अभी कुछ भी खाने का
मूड नहीं है मेरा!"

—मोना

हुआ रंग बदरंग

धूमधाम से जब जंगल में
होने लगा चुनाव;
खड़े हो गए गधे रामजी,
दे मूंछों पर ताव!

मगर उन्होंने बंदर जी से
मात करारी खाई;
हुआ रंग बदरंग, सभी ने
खिल्ली खूब उड़ाई!

—शांती मालवीय

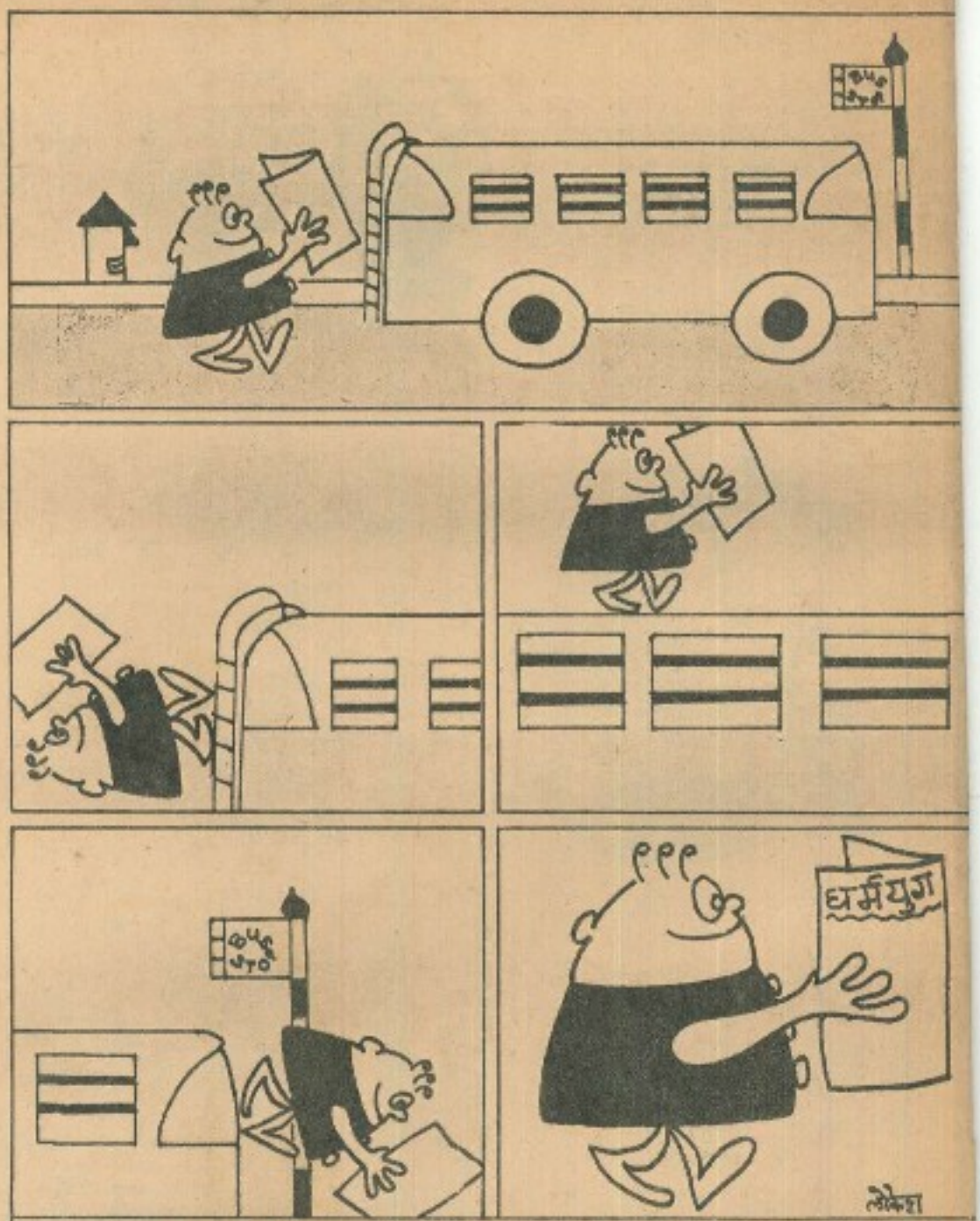

धर्मयुग हिंदी का सर्वाधिक लोकप्रिय सचित्र साप्ताहिक